सोवियत संघ से निरक्षरता-उन्मूलन

# सोवियत संघ से निरक्षरता-उन्मूलन

इंडिया पब्लिशर्स
सी-७/२, रिवर बैंक कोलोनी, लखनऊ

# विषय-सूची

# प्रस्तावना

आज जब हम अपने देश से अज्ञान और निरक्षरता के उन्मूलन के व्यापक अभियान में जुटे हुए हैं न्यायमूर्ति हरिस्वरूप की प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन की उपादेयता और भी समीचीन हो गई है।

इलाहाबाद उच्च न्यायालय के वरिष्ठ न्यायाधीश श्री हरिस्वरूप लब्ध-प्रतिष्ठ विधिशास्त्री, विचारक और लेखक है। वे इण्डो-सोवियत कल्चरल सोसायटी (इस्कस) की उत्तर प्रदेश राज्य परिषद के उपाध्यक्ष भी हैं। देश की समस्याओं और विकास से सम्बन्धित उनके अनेकानेक लेख विद्वानों और सामाजिक कार्यकर्त्ताओं मे समान रूप से समादृत होते रहे हैं।

सोवियत संघ की प्रगति और विकास मे उनकी गहरी रुचि रही है। वे एकाधिक बार सोवियत संघ की यात्रा भी कर चुके हैं। कुछ वर्ष पहले उन्होंने "फ्रीडम अन्डर कम्युनिज्म" नामक पुस्तक लिखी थी जिसकी व्यापक सराहना हुई थी। प्रस्तुत पुस्तक सोवियत संघ मे निरक्षरता-उन्मूलन अभियान सम्बन्धी उनके विस्तृत अध्ययन का सुपरिणाम है। निस्सन्देह, यह रुचिकर एवं प्रेरणाप्रद सिद्ध होगी।

इंडो-सोवियत कल्चरल सोसायटी की उत्तर प्रदेश राज्य परिषद की ओर से मैं न्यायमूर्ति हरिस्वरूप के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना अपना कर्त्तव्य समझती हूँ कि उन्होंने हमारे अनुरोध पर यह पुस्तक लिखी। मैं इण्डिया पब्लिशर्स को भी धन्यवाद देना चाहूँगी, जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन का भार वहन करने की तत्परता दिखाई।

---

**कौमुदी सिनहा**
महामन्त्री,
उत्तर प्रदेश राज्य परिषद,
डो-सोवियत कल्चरल सोसायटी

५ दिसम्बर '७६
लखनऊ

# भूमिका

निरक्षरता की समस्या आज भी एक विश्वव्यापी समस्या बनी हुई है और उसे हल करना कठिन सिद्ध हो रहा है। यूनेस्को के सांख्यिकी कार्यालय के अनुमानों के अनुसार, यद्यपि कुल जनसंख्या में निरक्षरों का प्रतिशत अनुपात धीरे-धीरे कम होता जा रहा है, परन्तु संसार में निरक्षरों की संख्या बढ़ती जा रही है। विश्व की १५ वर्ष से अधिक आयु की जन-संख्या का ३४ प्रतिशत भाग, अर्थात् ७८ करोड ३० लाख से अधिक प्रौढ आज भी निरक्षर हैं। आर्थिक दृष्टि से अल्पविकसित तथा विकासशील देशों में परिस्थिति भयावह न सही पर सचमुच गम्भीर है।

सोवियत संघ के सामने १९१७ में घोर निरक्षरता की समस्या थी। उस समय वह आर्थिक दृष्टि से बिल्कुल तबाह, सामाजिक दृष्टि से पिछडा हुआ और सांस्कृतिक दृष्टि से शोचनीय अवस्था में था; फिर भी सांस्कृतिक क्रान्ति के लेनिन के सिद्धान्तों का पालन करके वह दो दशाब्दियों की छोटी-सी अवधि में निरक्षरता को दूर करने में सफल हो गया। सोवियत संघ में निरक्षरता को इतने कम समय में दूर करने में जिन कारकों तथा उपायों का योगदान रहा वे सदैव सार्थक रहेंगे। इन सिद्धान्तों का पालन करके विश्व समाज से निरक्षरता दूर की जा सकती है और बहुत थोडे समय में ही ऐसा करना सम्भव हो सकता है।

सोवियत प्रयोग उन देशों के लिए अनुकरणीय है जहाँ निरक्षरता की समस्या अभी तक बनी हुई है।

१५ अगस्त, १९७६ —हरि स्वरूप

## साहसी प्रयोग

शिक्षा के विश्व-इतिहास मे शायद पहली बार १९१७ में जनसाधा-रण की साक्षरता को राज्यसत्ता का दायित्व, कर्त्तव्य और अधिकार घोषित किया गया। इस क्षेत्र में माता-पिता, निजी शिक्षक और गिरजाघरों के दावों को अस्वीकार कर दिया गया और बच्चो तथा प्रौढ़ों को शिक्षित बनाने के जनता के अधिकार को स्वीकार किया गया। साक्षरता को अब केवल व्यक्तिगत उपलब्धि न मानकर मानव व्यक्तित्व का अभिन्न अग माना जाने लगा। साक्षरता अब सामाजिक प्रतिष्ठा और निरक्षर जन-साधारण के शोषण का साधन नही रह गयी थी, बल्कि उसे शोषण को मिटाने का अस्त्र और समाजवाद के निर्माण का साधन समझा जाने लगा था।

क्रांति को निरक्षर लोगों, पिछडे हुए जन-साधारण, परतन्त्र स्त्रियों और उपेक्षित बच्चों का एक विशाल समुदाय उत्तराधिकार में मिला था। इनमें ऐसे लोग थे जिनकी कोई लिपिबद्ध भाषा नहीं थी और ऐसे भी लोग थे जो पिछली सात पीढ़ियों से निरक्षर चले आ रहे थे। उनमे ऐसी स्त्रियाँ थी जिनके लिए पुस्तक को हाथ लगाना या सूर्य के प्रकाश को देखना वर्जित था। उनमें ऐसे पुरुष थे जो स्कूल जाने, पादरी की आज्ञा का उल्लंघन करने या 'वे' लोगो और नौकरशाहों के साथ बराबरी की बात सोचने का भी साहस नही कर सकते थे। अपने चारो ओर इस प्रकार के लोगो को देखकर लेनिन ने घोषणा की कि जब तक निरक्षरता को समूल नष्ट नही किया जायेगा और जनता का सांस्कृतिक स्तर ऊँचा नहीं उठाया जायेगा तब तक साम्यवाद का निर्माण करना सम्भव नही है।

निरक्षरता को समाप्त करने के मुख्य उद्देश्य से तुरन्त सांस्कृतिक क्रान्ति आरम्भ की गयी। वह क्रांति की भावना, शक्ति तथा स्फूर्ति से ओत-प्रोत थी, और उसने एक राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप धारण कर लिया। जो भी आदमी पढा-लिखा था उसने निरक्षरों को पढाने का बीड़ा उठा लिया। पत्र-पत्रिकाओं को इस काम में जुटा दिया गया और शिक्षा के अन्य माध्यमों को सक्रिय किया गया। रूस का कोना-कोना 'निरक्षरता उन्मूलन केन्द्र' बन गया और हर घर पाठशाला बन गया। सोवियत जनता ने नवम्बर १९१७ मे निरक्षरता के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की थी और १९४० से पहले ही उसने यह लड़ाई जीत ली थी। जिन लोगों के पास कोई भाषा नही थी उनके लिए उन्होंने भाषा बनायी, जहाँ स्कूल नही थे वहाँ स्कूल बनाये, करोड़ो की संख्या में पाठ्य-पुस्तकें छापी, हजारो की सख्या मे अध्यापक प्रशिक्षित किये और जाति, भाषा, आयु या स्त्री-पुरुष के किसी भेदभाव के बिना हर व्यक्ति को साक्षरता के वरदान से लाभान्वित किया।

यह बात अब एक अकाट्य सत्य बन चुकी है कि निरक्षता को सोवियत जीवन से मिटाया जा चुका है और यह कि उसे अणु विस्फोट की गति से मिटाया गया है।

सोवियत सघ में निरक्षरता-विरोधी अभियान की सफलता में जिन बातों से योग मिला उन्हे सार-रूप से इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :

(१) निरक्षरता के उन्मूलन के अध्यादेश के पीछे अत्यन्त सशक्त प्रेरक शक्ति, अर्थात्, समाजवाद का निर्माण।
(२) शिक्षा का लोकतन्त्रीकरण, सभी के लिए उसे समान रूप से नि:शुल्क सुलभ बनाना।
(३) जनता के जीवन तथा कार्य के साथ शिक्षा का सम्बन्ध जोड़ना और उसे गिरजाघरों से अलग करना।
(४) जनता को मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देना।
(५) स्त्रियों की मुक्ति।

इस अभियान की सफलता में जिन अन्य बातों का योगदान रहा वे थी :

(१) शिक्षा पर केन्द्रीय नियत्रण;
(२) स्कूलों, पुस्तकालयों, संग्रहालयों तथा प्रदर्शनियों की व्यापक व्यवस्था की स्थापना;
(३) शिक्षकों तथा साक्षरता-सैनिकों की सेना का संगठन;
(४) बहुत बड़ी मात्रा में पुस्तकों तथा पाठ्य-सामग्री की छपाई, प्रकाशन तथा वितरण;
(५) सांस्कृतिक केन्द्रों, स्त्रियों के क्लबों तथा बाल केन्द्रों की स्थापना;
(६) छापेखानों, सिनेमा, रेडियो और पत्र-पत्रिकाओं का निरक्षर जन-साधारण की सेवा में लगा दिया जाना।

शिक्षा के लिए उपलब्ध धन-राशि हमेशा शिक्षा के विकास में सबसे महत्वपूर्ण उपकरण होती है। शिक्षा में लगायी जाने वाली धन-राशि और उसके फलस्वरूप उपलब्ध होने वाली शिक्षा के बीच परस्पर सम्बन्ध होता है; जितनी अधिक धन-राशि व्यय की जायेगी उतना ही अधिक शिक्षा का प्रसार होगा। "जारशाही सरकार शिक्षा के लिए हास्यास्पद हद तक कम धन-राशि व्यय करती थी। क्रान्ति से पहले तक शिक्षा प्रतिष्ठानों के निर्माण पर उससे कहीं कम पैसा खर्च किया जाता था जितना जेलखानों के निर्माण तथा उनकी मरम्मत पर खर्च किया जाता था" (ए० शार्ट हिस्ट्री आफ द यू० एस० एस० आर०, पृष्ठ ३४)। जनव्यापी निरक्षरता इसी का परिणाम थी। विशेषज्ञों का कहना है कि क्रान्ति से पहले शिक्षा पर जितना पैसा खर्च किया जाता था उस रफ्तार से पूरी जनसंख्या को शिक्षित बनाने में कई शताब्दियाँ लग जाती।

अक्तूबर क्रान्ति ने इस पूरे ढर्रे को बदल दिया। राष्ट्रीय बजट का काफी बड़ा हिस्सा निरक्षरता के उन्मूलन के लिए लगाया जाने लगा। सोवियत संघ में सम्मिलित विभिन्न जनतन्त्रों ने भी अपने वित्तीय साधनों का काफी बड़ा भाग शिक्षा के विकास में लगाया। इन राशियों के अति-

रिवत सार्वजनिक सगठनो, ट्रेड यूनियनों, फैक्ट्रियों और फार्मों ने भी पैसा दिया।

नवंबर १९१७ मे ही सोवियत सरकार ने यह घोषणा कर दी थी : "राष्ट्रीय बजट की दूसरी मदों मे हमें कितनी ही कटौती क्यों न करनी पडे लेकिन सार्वजनिक शिक्षा के लिए स्वीकृत धन-राशि ऊँची रहनी चाहिए। शिक्षा का विपुल बजट किसी भी राष्ट्र के लिए गर्व तथा गौरव का विषय होता है।" केन्द्रीय सरकार और जनतन्त्रो की सरकारो ने अपने वचन का पालन किया और साक्षरता तथा शिक्षा के काम मे पैसे की कमी के कारण कभी कोई बाधा नहीं पडी। वार्षिक बजटो मे शिक्षा के लिए स्वीकृत धन-राशि क्रमशः बढ़ती ही रही। विभिन्न सरकारो ने जनता को साक्षर बनाने के लिए जी खोलकर पैसा खर्च किया। हर साल सरकार की ओर से शिक्षा के लिए स्वीकृत धन-राशि बढ़ती ही रही।

अगले पचवर्षीय योजनाकाल (१९७६-१९८०) मे सार्वजनिक शिक्षा को और अधिक विकसित करने और सार्विक शिक्षा मे सुधार करने की कल्पना की गयी है। सोवियत सघ ने १९७५ में ही शहरों तथा देहातों मे सभी के लिए १० वर्षीय माध्यमिक शिक्षा की व्यवस्था कर देने का अपना लक्ष्य पूरा कर लिया था। अगले पाँच वर्षों मे कम से कम ७० लाख छात्रो के लिए नये सामान्य शिक्षा के स्कूल बनाये जायेंगे, जिनमें ४५ लाख छात्र ग्रामीण क्षेत्रो के होंगे।

सोवियत प्रयोग ने यह बात सिद्ध कर दी है कि निरक्षरता को दूर करने का एक मात्र उपाय है निरक्षर लोगों को पढाना।

इस लक्ष्य तक पहुँचने का न तो कोई छोटा रास्ता है और न ही कोई दूसरा रास्ता। अक्षर चाहे पुस्तको के माध्यम से पढाये जायें, चाहे फिल्मों, रेडियो या टेलिविजन के माध्यम से या प्रत्यक्ष अध्यापन के माध्यम से, यह काम तो करना ही पड़ेगा। इससे यह भी सिद्ध होता है कि बाद मे भी शिक्षा का क्रम जारी रखना आवश्यक है ताकि नव-साक्षर प्रौढ अपनी इस क्षमता का उपयोग न होने के कारण कहीं फिर निरक्षर न हो जायें।

## अध्याय २

## भयावह उत्तराधिकार

सोवियत ताजिकिस्तान की राजधानी दुशांबे मे शिक्षा संग्रहालय में कुछ ऐसी बातों का रहस्योद्घाटन हुआ जिनकी मैंने कल्पना भी नही की थी। साक्षरता तथा निरक्षरता के दीर्घकालीन ग्राफ-चित्रों से यह बात स्पष्ट दिखाई देती थी। दुशांबे में, और उजबेकिस्तान (ताशकन्द, बुखारा, समरकद) तथा अन्य स्थानों में बडी उम्र के जो उच्च शिक्षा प्राप्त लोग थे उनमें से अधिकांश ऐसे थे जिनके माता-पिता सभी निरक्षर थे और सभी नौजवानो के दादा-दादी या नाना-नानी अनिवार्य रूप से ऐसे लोग थे जिन्होंने कभी किताब छुई भी नही थी। यह बात सचमुच आश्चर्य-चकित कर देने वाली थी। लाखों सोवियत श्रमजीवी लोग, जिनमें मंत्री न्यायाधीश, प्रोफेसर, वकील, कृषिवेत्ता, डाक्टर, अभिनेता, लेखक और कलाकार सभी शामिल थे, ऐसे परिवारों के थे जो कई पीढ़ियों से सर्वथा निरक्षर रहे थे। आज कोई भी निरक्षर आदमी ढूंढे से नही मिलता, और पहले स्थिति यह थी कि कोई साक्षर आदमी नही मिलता था। क्रांति से पहले जारशाही के दौर में जन-साधारण को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकारी या इसके योग्य नही समझा जाता था। मध्य एशिया के वासियो मे—उजबेक, ताजिक, किरगीज, तुर्कमेन तथा अन्य जातियों के लोगों मे—निरक्षरता मानो नियम था और साक्षरता उसका अपवाद। और इस अपवाद में—कभी कोई स्त्री तो आती ही नही थी। रूस के दूसरे भागों में भी स्थिति इससे कुछ बहुत अच्छी नही थी।

"शाही सरकार शैक्षिक गतिविधियों को प्रोत्साहन देने के बजाय जागृति फैलाने के काम मे बाधा डालने का भरसक प्रयत्न करती थी" (एल०, पावलोव्स्की, 'एजुकेशन अन्डर कम्युनिज्म', एजुकेशनल रिव्यू,

खण्ड ४२, पृष्ठ २१०)। लोगों को जान-बूझकर निरक्षर रखा जाता था। अलेक्जेंडर प्रथम के शासनकाल मे शिक्षा-मन्त्री शिस्कोव ने घोषणा की थी . *जन-साधारण को, या उनमें से अधिकांश लोगों को भी, पढना सिखा* देने से लाभ की अपेक्षा हानि अधिक होगी।

जारशाही के शासनकाल के दौरान अधिकाश रूसी निरक्षर रहे। साक्षरता विशेषाधिकार सम्पन्न तथा अभिजात वर्गों के वच्चो तक ही सीमित रही; केवल धनवान लोगों के पास ही शिक्षा प्राप्त करने के लिए पर्याप्त धन था। १८६७ की रूस की जनगणना से पता चला कि केवल २० प्रतिशत प्रौढ जनसख्या पढना-लिखना जानती थी। गैर-रूसी जातियों में साक्षरता का स्तर निराशाजनक हद तक नीचा था। ६६ ५ प्रतिशत ताजिक, ६६ ४ प्रतिशत किरगीज, ६८·३ प्रतिशत याकूत, ६६ ३ प्रतिशत तुर्कमेन और ६८ ४ प्रतिशत उजवेक निरक्षर थे (ए शार्ट हिस्ट्री आफ द यू० एस० एस० आर०, भाग २, पृष्ठ ३४७, सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी, इतिहास संस्थान)। २०वी शताब्दी के आरम्भ होने के समय रूस की जनसख्या के प्रति एक हजार व्यक्तियों मे से केवल २२३ व्यक्ति साक्षर थे। लगभग ७० प्रतिशत पुरुष और लगभग ६० प्रतिशत स्त्रियाँ निरक्षर थी। क्राति से पहले के रूस की ७१ जातियों में से ४८ की अपनी कोई लिपिवद्ध भाषा नही थी।···हर दो सौ ताजिकों मे से केवल एक साक्षर था और प्रति एक हजार तुर्कमेनों में से केवल ७ साक्षर थे। देश के उत्तर मे रहने वाले याकूत नामक जातीय समुदाय की कुल आवादी मे साक्षरो की संख्या कुल ०·७ प्रतिशत थी (एजुकेशन इन द यू० एस० एस० आर०, सोवियत रिव्यू, १५ जुलाई, १९६७, पृ० ५१)। १९१६ मे (नौ वर्ष से छोटे वच्चों को छोड़कर) रूस की जनसंख्या का ७० प्रतिशत भाग निरक्षर था, आधे से अधिक वच्चों ने किसी भी प्राथमिक अथवा माध्यमिक स्कूल मे शिक्षा नहीं पायी थी (लेनिन ऐंड पब्लिक एजुकेशन पृष्ठ ३१)।

क्राति से पहले रूस मे जो थोड़ी-वहुत शिक्षा थी भी उस पर गिरजाघरों और मस्जिदों का नियंत्रण था। कट्टरपंथी रूसी गिरजाघर

स्कूल चलाता था और बच्चो को ऐसी शिक्षा देता था जो उन्हें बेहतर ईसाई बना सके और वे गरीबी को अपना भाग्य मानकर स्वीकार कर लें। इसी प्रकार मध्य एशिया के सुदूर क्षेत्रों में इस्लामी मुल्ला बच्चो को कुरान रटाते थे, इस्लामी दीनियात सिखाते थे और उन्हे दबे-कुचले रहने पर सन्तुष्ट रहने की दीक्षा देते थे। मुस्लिम मदरसों तथा मकतबों में सारी पढ़ाई कुरान रटाने और बच्चों के दिमागो में विभिन्न धार्मिक ग्रंथ तथा प्रार्थनाएँ ठूंस देने तक सीमित रहती थी। लडकियो को वहाँ बिल्कुल नही आने दिया जाता था। शिक्षा का उन समस्याओं से कोई सम्बन्ध नही था जिनका सामना लोगों को अपने व्यावहारिक जीवन मे करना पडता था। उन्हे यह सिखाया जाता था कि वे उत्पीडन, दमन, गरीबी और जहालत को अपना अटल भाग्य मान लें। क्रांति से पहले धार्मिक शिक्षा का उद्देश्य यही था कि छात्रों के मन मे इतना रूहानी खौफ बिठा दिया जाये कि वे अपने भौतिक अधिकारों के लिए आवाज न उठा सकें।

शिक्षा का उद्देश्य जन-साधारण को शिक्षित बनाना नही बल्कि पीढी-दर-पीढ़ी नौकरशाही के कर्मचारी पैदा करते रहना था। शिक्षा मातृ-भाषा के माध्यम से नही बल्कि रूसी मे दी जाती थी। लेटिन और यूनानी भी पढायी जाती थी। "क्लासिकी भाषाओं का और इसके साथ ही जार शासकों इतिहास और इसी प्रकार के अन्य सारहीन विषयो का अध्ययन छात्रों को वास्तविक जीवन से अलग कर देता था और उन्हें सहज ही नौकरशाही के सांचे में ढाल देता था।" शिक्षा केवल इसलिए दी जाती थी कि स्थानीय निवासियों में से पुलिस और प्रशासन-तन्त्र के लिए कर्मचारी प्रशिक्षित किये जा सकें।

स्कूल मे बावर्चियो और खानसामाओं, कारखानो और खेतों के मजदूरों, दूकानदारों और उन लोगों के लिए कोई स्थान नही था जो नौकरशाही सरकार और राष्ट्र के शासको की चाकरी करते थे। अलक्जेंडर तृतीय के शासनकाल मे यह समझा जाता था कि स्कूल "बावर्चियों के बच्चो" के लिए नही होते। २०वी शताब्दी के आरम्भ तक भी यही स्थिति रही;

उसके बाद भी स्कूलों मे गरीबों के बच्चों के लिए कोई स्थान नही था। स्कूल अभिजात वर्ग का ही ठिकाना बने रहे।

सोवियत शासन की दसवी वर्षगांठ के अवसर पर सोवियत उपलब्धियो की समीक्षा करते हुए लेनिन की पत्नी और निरक्षरता-विरोधी अभियान की नेता एन० के० क्रुप्सकाया ने कहा: "हम उन "शानदार" पुराने दिनों को भूलते जा रहे हैं जब जमीदारों और पूंजीपतियों का बोलबाला था, जब जारशाही शासन ने रूसी जनता को अन्धकार मे रखने के लिए कोई कोशिश उठा नही रखी थी। हम इस बात को भुलाने लगे हैं कि क्रान्ति से पहले सार्वजनिक स्कूल किस ढंग के थे। सारा देश अर्ध-निरक्षर था। सार्वजनिक स्कूल पर पादरियो, धनी किसानो और गांव के पुलिस वालो का कड़ा अकुश रहता था। अध्यापकों को खुले आम संदेह की दृष्टि से देखा जाता था। ईसाई धर्म, प्रार्थनाओं और मूर्तियों के बारे में पढाया जाता था। शिक्षा-सम्बन्धी हर काम मे धार्मिक अंध-विश्वास कूट-कूटकर भरे हुए थे। गणित मे इस प्रकार की समस्याओं की भरमार रहती थी जैसे यह कि 'सत सेराफिम सारोव्स्की का देहात अमुक तिथि को हुआ था और उनकी अस्थियो का पता अमुक तिथि को चला; उनकी मृत्यु के दिन से उनकी अस्थियों का पता चलने तक कितने दिन का समय बीता ?' बच्चो की पाठ्य-पुस्तकों मे कदम-कदम पर फरिश्तो की, धार्मिक पर्वों की, ईश्वर की सर्व शक्तिमत्ता की और इसी प्रकार की अन्य बातों की चर्चा रहती थी। इतिहास की सारी पुस्तकें धार्मिक भावना और अन्ध-राष्ट्रवाद की भावना से ओत-प्रोत होती थीं। स्कूलों मे सामाजिक परिवेश की चर्चा करने की मनाही थी। प्राकृतिक विज्ञान को संदेह की दृष्टि से देखा जाता था।"

जनता को दबाकर रखने और मनमाने ढंग से चलाये जाने वाले अर्थतन्त्र के वास्ते पूंजीवादी पद्धति के अनुसार श्रम करने वालो के रूप मे उसे उपलब्ध रखने और सेना के लिए बिना सोचे-समझे जान पर खेल जाने वाले सैनिक उपलब्ध करने के उद्देश्य से सरकार बड़ा प्रशासनिक नियन्त्रण रखना चाहती थी। इस काम के लिए निरक्षरता बहुत कारगर

साधन था। जार जानते थे कि जब तक जनता को निरक्षर और अनपढ नही रखा जायेगा तब तक न औपनिवेशिक राजनीति चलायी जा सकती है और न पूंजीवादी अर्थतन्त्र को बनाये रखा जा सकता है। रूस की पूंजीवादी व्यवस्था ने जन-साधारण को "घुटन और अन्धकार—" के गर्त्त मे ढकेल दिया था। "पूंजीपति वर्ग को इस बात मे दिलचस्पी थी कि श्रमिकों को जाहिल रखा जाये" (लेनिन)। यदि कोई अपनी ओर से प्रयत्न करके शिक्षा को गरीब लोगों तक ले जाने की कोशिश करना चाहता तो इसकी भी इजाजत नही दी जाती थी। जार की नौकरशाही सरकार प्रौढो के लिए स्वैच्छिक "रविवारीय स्कूलों" के पक्ष मे नही थी और उन पर पाबदी लगा दी गयी थी। उन्हे इस आधार पर बंद कर दिया गया था कि वे प्रौढ मजदूरो को चार बुनियादी नियमों, अर्थात जोड़, घटाव, गुणा और भाग के अलावा भिन्न के सवाल लगाना भी सिखाते थे। सरकार ने इन रविवारीय स्कूलो के अध्यापकों को दंड दिये, "साक्षरता समितियो" को धमकियां दी, सैनिको को पढ़ना-लिखना सिखाने-की मनाही कर दी और सार्वजनिक पुस्तकालयो मे नेक्रासोव, लिओ तोलसताय, गोर्की और कोरेलेंको जैसे प्रगतिशील लेखको की पुस्तकें रखे जाने पर पाबन्दी लगा दी।

साक्षरता तथा उच्च शिक्षा को बढ़ावा देने के विपुल प्रयासों के बावजूद मजदूर और किसान हमेशा शिक्षा से वंचित ही रहे। यद्यपि उन्नीसवी शताब्दी के अन्त में अन्य पूंजीवादी देशों की तरह रूस मे भी प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य कर दी गयी थी, पर जन-साधारण निरक्षर ही रहे जारशाही रूस के बारे मे तुलनात्मक आकड़ों से (जो एल्फ्रेड करेल्ला ने अपनी पुस्तक **फाइव इयर प्लान एण्ड द कल्चरल रिवोल्यूशन** मे दिये है) पता चलता है कि रूस जनता को शिक्षा देने की ओर कोई ध्यान नही दे रहा था।

जिस समय सोवियत सरकार ने सत्ता सभाली उस समय जन-शिक्षा व्यवस्था बिल्कुल तबाही की हालत मे थी। जारशाही रूस से उमे एक निराशाजनक उत्तराधिकार के रूप में हर अवस्था और हर सामाजिक

तर्कसंगत परिणाम थी जो महान क्रांति के बाद सोवियत संघ मे हुए। सांस्कृतिक उत्थान और अर्थतन्त्र के समाजवादी पुनर्निर्माण एक ही प्रक्रिया के ऐसे अभिन्न अंग माने गये जो एक-दूसरे के पूरक थे और एक-दूसरे को गति प्रदान कर रहे थे। सच तो यह है कि सांस्कृतिक क्रांति सोवियत संघ मे समाजवादी निर्माण की लेनिन की योजना का ही एक अग थी। सांस्कृतिक क्रांति का अर्थ था जनता के शैक्षिक तथा सांस्कृतिक स्तर को तेजी से ऊँचा उठाना और ऐसे सामाजिक तथा सांस्कृतिक मानदण्ड की स्थापना करना जो आगे चलकर समाज को साम्यवादी संस्कृति की मन्जिल तक ले जा सकें। सांस्कृतिक क्रांति का मुख्य उद्देश्य था नये मनुष्य को नये समाज के अनुकूल शिक्षा देना तथा ढालना। सोवियत व्यवस्था की स्थापना अपने आप मे जन-साधारण की राजनीतिक शिक्षा के लिए और उनके बीच भी समाजवादी संस्कृति का संचार करने के लिए एक गतिवान माध्यम था। परन्तु यह वात स्वतः उन व्यक्तियों मे इस नयी संस्कृति को आत्मसात करने, उसे अंगीकार करने तथा आगे बढाने की क्षमता विकसित नही कर सकती थी। इसके लिए शिक्षा नितान्त आवश्यक थी और साक्षरता के बिना शिक्षा सम्भव नही थी।

निरक्षरता का उन्मूलन सांस्कृतिक क्रांति का एक अग था। सच तो यह है कि वह समाजवादी संस्कृति का निर्माण करने की क्रांति का पहला कदम था और लेनिन के सांस्कृतिक क्रांति के कार्यक्रम का आधार था। "....अब से विज्ञान के सारे चमत्कार और संस्कृति की सारी उपलब्धियां पूरे राष्ट्र की सम्पत्ति होगी और अब मानव वुद्धि तथा मानव प्रतिभा को उत्पीड़न तथा शोषण के लिए इस्तेमाल नही किया जायेगा।" यह घोषण व्लादिमिर इल्यीच लेनिन ने सोवियत सत्ता की स्थापना के समय की थी। अपने शब्दो को व्यवहार में पूरा करने के लिए उन्होने क्रांति की शक्तियों को निरक्षरता के उन्मूलन की दिशा मे निर्देशित किया और उन्हे साक्षरता के पाठ बूढ़े और नौजवान हर व्यक्ति तक ले जाने का काम सौंपा, चाहे वह मास्को के बीच मे रहता हो या सुदूर पामीर के छोर पर। समाजवादी निर्माण के प्रवर्त्तकों के सामने सबसे महत्वपूर्ण

काम था प्रौढ़ लोगो को शिक्षा देना और मजदूरो के सांस्कृतिक स्तर को ऊँचा उठाना। यह समस्या गैर-रूसी क्षेत्रों मे विशेष रूप से गम्भीर थी जहाँ साक्षरता का स्तर सबसे नीचा था और जहाँ मुल्लाओ, जागीरदारों और सरकारी कर्मचारियों के अतिरिक्त शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जिसने शिक्षा प्राप्त की हो, और जहाँ किसी साक्षर औरत को खोज निकालना तो प्राय: असम्भव था।

निरक्षरता न केवल निरक्षरो के लिए बल्कि पूरे समाज के लिए अभिशाप ही थी। वह समाजवादी निर्माण के मार्ग में बाधा बनी हुई थी और उसका उन्मूलन एक सामाजिक आवश्यकता थी। इस समस्या की व्यापकता तथा गम्भीरता को समझते हुए लेनिन ने निरक्षरता के उन्मूलन को महान क्रांति का ही एक अभिन्न अंग बना दिया। उसका अभिन्न अग बना दिया। उसका अभिन्न अग बन जाने पर उसमे भी वही गतिशीलता, वही शक्ति, वही प्रभाव और वही वेग पैदा हो गया।

लेकिन सांस्कृतिक क्रांति का मार्ग कांटो और अनेक खतरों से भरा हुआ था। जो लोग अनपढ श्रमिकों का शोषण करते आये थे वे सभी निरक्षरता को दूर करने के अभियान का उठकर विरोध कर रहे थे। इनमे धनी तथा शक्तिशाली पूंजीपति, बड़े-बड़े जागीरदार, पूंजीवादी बुद्धिजीवी वर्ग के लोग, प्रतिक्रियावादी नौकरशाह, धर्मगुरु और उनके अन्धे अनुयायी सभी शामिल थे। उनका विरोध नकारात्मक असहयोग तक ही सीमित नही था, बल्कि सकारात्मक विरोध था। उन्होंने साक्षरता-विरोधी प्रचार का सहारा लिया, निरक्षरता-विरोधी अभियान चलाने वालो की हत्याएँ की, जिन लोगों ने पढने या कभी संस्कृति को अपनाने की कोशिश की उन्हे सूली पर चढा दिया और स्कूलो को आग लगा दी। लेकिन उनकी ये ध्वसात्मक कार्रवाइयाँ निरक्षरता के विरुद्ध जनता के प्रबल प्रहार को रोकने मे सफल नही हो सकी; और सांस्कृतिक क्रांति को रोकने के उनके सारे प्रयास विफल रहे।

सांस्कृतिक क्रांति को ध्वंस तथा निर्माण की प्रकृत क्रांतिकारी प्रक्रिया का ही अनुसरण करना पड़ा। उसे पहले भूमि को साफ करके, उसमें से

झाड-झंखाड़ निकालकर फिर नयी संस्कृति का पौधा लगाना पड़ा। शिक्षा का क्षेत्र भी झाड-झंखाड़ से भरा पड़ा था : धार्मिक नियन्त्रण, सामन्ती प्रभाव, अत्यधिक व्ययसाध्य, भेदभाव और सबसे बढ़कर व्यवस्था की पूँजीवादी दिशा।

क्रांति के फौरन बाद शिक्षा की जारशाही पद्धति तथा संस्थाएँ खत्म कर दी गयी। पुराना शिक्षा मंत्रालय भंग कर दिया गया और उसकी जगह शिक्षा की जन-कमिसारियट की स्थापना की गयी और शिक्षा के कमिसार ए० वी० लूनाचार्स्की ने क्रान्ति के एक सप्ताह के भीतर ही बोल्शेविक शिक्षा नीति के उद्देश्यों की व्याख्या इस रूप में की : निरक्षरता का शीघ्र उन्मूलन, सबके लिए अनिवार्य निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था, अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए संस्थानों की स्थापना और शिक्षा को गिरजाघरों से अलग करना। नास्तिकता को, जिसे कम्युनिस्ट नीति तथा विचारधारा का आधार घोषित किया गया था, शिक्षा के क्षेत्र में भी लागू किया गया। और जनवरी १९१८ में जन-कमिसारियट परिषद ने धर्म-निरपेक्ष शिक्षा का अध्यादेश जारी किया। समाजवादी अध्यादेशों ने स्कूलों को गिरजाघरों से और गिरजाघरों को स्कूलों से अलग कर दिया। स्कूलों के द्वार सभी के लिए खोल दिये। मई १९१८ में सहशिक्षा की व्यवस्था आरम्भ की। शिक्षा को पूर्णत. नि.शुल्क बना दिया और उसे एक समाजवादी दिशा प्रदान की। जारशाही की स्लेट रातों-रात बिल्कुल साफ कर दी गयी ताकि उस पर समाजवादी संस्कृति की नयी नीति अंकित की जा सके।

शिक्षा-नीति को नयी समाजवादी संस्कृति, ऐसी संस्कृति का निर्माण करने की दिशा में क्रियाशील किया गया, जो समस्त जनता के लिए हो। लेनिन ने की संस्कृति के विरुद्ध 'जन-संस्कृति' के—'सर्वहारा-संस्कृति' के महत्व पर जोर दिया। "प्रोलितारी संस्कृति के बारे में" नामक अपनी रचना में (संग्रहीत रचनाएं, खंड २५, पृष्ठ ४०९), लेनिन ने कहा : "सोवियत मजदूर-किसान गणतन्त्र में शिक्षण प्रक्रिया का संचालन, राजनीति तथा कलाओं दोनों ही के क्षेत्र में, अपने अधिनायकत्व के

उद्देश्यो की सफल पूर्ति के लिए सर्वहारा के अपने वर्ग—संघर्ष की भावना से ओत-प्रोत होना चाहिये : पूंजीपति वर्ग की सत्ता का अन्त, वर्गों का खात्मा और मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण का उन्मूलन।" उनके लिए शिक्षा किसी वर्ग विशेष के ही नहीं बल्कि समस्त जनता के जीवन की एक सामाजिक प्रक्रिया थी। इसलिए उसे सर्वहारा वर्ग तक ही सीमित नही रखा जा सकता था बल्कि उसे समाज के हर सदस्य तक पहुँचाना आवश्यक था। ज्ञान की उपलब्धियो में सभी को हिस्सा मिलना आवश्यक था। इसीलिए क्रांति के बाद शिक्षा की नीति में ये बातें शामिल करने का आदेश दिया गया : (१) निरक्षरता का पूर्ण उन्मूलन; (२) सभी के लिए नि.शुल्क, धर्म-निरपेक्ष तथा अनिवार्य शिक्षा; (३) सभी के लिए अधिकतम अवसर, (४) अध्यापकों का एक प्रशिक्षित वर्ग तैयार करना; और (५) जीवन, राजनीति तथा अर्थनीति से शिक्षा का सम्बन्ध जोड़ना।

लेनिन ने निरक्षरता के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करके समाजवाद का निर्माण आरम्भ किया। यह बात स्वीकार की जा चुकी थी कि निरक्षरों का समूह समाजवाद का निर्माण नहीं कर सकता। यह बात भी भलीभांति समझी जा चुकी थी कि शिक्षा को निजी रूप से कुछ व्यक्तियों के हाथों में नही छोड़ा जा सकता और यह कि इस समस्या को राष्ट्रीय स्तर पर हल करना होगा। अपनी स्थापना के तीसरे दिन सोवियत सरकार ने शिक्षा-प्रणाली के निर्देशन के लिए सार्वजनिक शिक्षा के जन-कमिसार की नियुक्ति का विशेष अध्यादेश जारी किया और बाद में चलकर सभी स्कूल राज्य की अधिकार-सत्ता के आधीन कर दिये गये। बहुत पहले २६ अक्तूबर, १६१७ को ही सोवियत सरकार ने अपनी नीति घोषित करते हुए बता दिया था कि उसके कार्यक्रम की बुनियादी बातों में ये चीजें शामिल होंगी : निरक्षरता का उन्मूलन, सभी के लिए नि.शुल्क, अनिवार्य, धर्म-निरपेक्ष शिक्षा का प्रबंध, जो भी यथासम्भव उच्चतम शिक्षा प्राप्त करना चाहे उसके लिए उसका प्रबंध, पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षित अध्यापकों का एक समूह तयार करना और शिक्षा देने के लिए असीमित समर्थन।

२६ दिसम्बर १९१९ को जन-कमिसार परिषद ने रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतंत्र मे बसने वाले लोगों के बीच निरक्षरता के उन्मूलन के लिए अपना ऐतिहासिक साक्षरता अध्यादेश जारी किया जिस पर लेनिन के हस्ताक्षर थे। इस अध्यादेश मे कहा गया था :

> "जनतंत्र के सभी निवासियों को सजग रूप से देश के राजनीतिक जीवन में भाग लेने का अवसर प्रदान करने के लिए जन-कमिसार परिषद ने निर्णय किया है कि जनतंत्र के ८ से ५० वर्ष तक की आयु के हर उस नागरिक को जो पढ़ना-लिखना नही जानता है, या तो स्वयं अपनी मातृ भाषा में, या यदि वह चाहे तो रूसी में, पढना और लिखना सीखना पड़ेगा।"

इस अध्यादेश द्वारा एक ऐसा कानून बनाया गया जैसा कि उस समय तक किसी भी देश के कानून बनाने के इतिहास में नहीं मिलता था। आम तौर पर कानून में नागरिकों पर कुछ प्रतिबंध लगाये जाते हैं कि "तुम ऐसा नहीं करोगे...", लेकिन लेनिन के अध्यादेश में समस्त जनता को शिक्षा प्राप्त करने का अनुल्लंघनीय आदेश दिया गया था। यह यथास्थिति बनाये रखने या वर्तमान सामाजिक मूल्यों की रक्षा करने का अध्यादेश नही था, बल्कि एक नये समाज की रचना का, एक नयी समाज-व्यवस्था के निर्माण का अध्यादेश था। यह अध्यादेश इस दृष्टि से अद्वितीय था कि इसका संबंध जड़ वस्तुओ से नहीं बल्कि मनुष्य मात्र से था। इसमे मनुष्य के कल्याण की बात कही गयी थी उसकी संपत्ति की नही। इसमें वैयक्तिक उपलब्धि, को, मानव व्यक्तित्व के विकास को, एक नये मानव के निर्माण को आवश्यक ठहराया गया था। इस प्रकार का अध्यादेश लेनिन ही जारी कर सकते थे।

इसके बाद भी अनेक बार ठोस परिस्थितियो का सामना करने के लिए उपयुक्त अध्यादेश जारी किये गये। जुलाई १९२० के अध्यादेश (सोवियत संघ १९२०, सं० ६९) में निरक्षरता के उन्मूलन के लिए एक अतिविशिष्ट आयोग की स्थापना की आज्ञा दी गयी। १४ अगस्त

१९२३ के अध्यादेश (सोवियत सघ १९२३, सं० ७२) में निरक्षरता के उन्मूलन के काम को और तेज करने और कार्य-केन्द्रों की संख्या बढ़ाने की आज्ञा दी गयी। १०मार्च १९२४ के अध्यादेश (सोवियत संघ १९२४, सं०३९) मे सोवियतों की स्थानीय समितियो को यह काम पूरा करने की जिम्मेदारी सौपी गयी। १९ फरवरी १९२७ के अध्यादेश (सोवियत संघ १९२७, सं० २१) में इस काम को और तेज करने की आज्ञा दी गयी और—"निरक्षरता का नाश हो" का नारा दिया गया।

शिक्षा को, जिसकी परिधि में 'साक्षरता' भी शामिल है, जनता की एक बुनियादी आवश्यकता के रूप मे स्वीकार किया गया और उसे सोवियय जनतन्त्र के 'बुनियादी कानून' में, अर्थात् उसके सविधान में स्थान दिया गया।

५ दिसम्बर १९३६ को सोवियत काँग्रेस द्वारा स्वीकार किये गये तीसरे सविधान मे सोवियत संघ के नागरिकों के शिक्षा-संबंधी अधिकारों की और भी अधिक स्पष्ट शब्दों मे व्याख्या की गयी और उसके अध्याय १० की धारा १२१ मे प्रावधान किया गया :

"सोवियत संघ के नागरिकों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है।"

सभी के लिए प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य घोषित करदी गयी; शिक्षा को नि.शुल्क कर दिया गया; उच्चतर शिक्षा के स्कूलों में अधिकाश छात्रों के लिए सरकारी छात्र वृत्तियों की व्यवस्था की गयी; स्कूलो में शिक्षा छात्रों की मातृ भाषा के माध्यम से दी जाने लगी, और कारखानों, सरकारी फार्मो, मशीन तथा ट्रैक्टर स्टेशनो और सामूहिक फार्मों में मेहनत करने वालो को व्यावसायिक, तकनीकी तथा कृषि-संबधी शिक्षा नि.शुल्क देने की व्यवस्था की गयी और इस प्रकार इस अधिकार का पूर्ण आश्वासन कर दिया गया।

# अध्याय ४

## प्रबल प्रेरणा

कोई भी क्रांति तब तक सफल नहीं हो सकती जब तक कि उसका कोई उद्देश्य न हो, कोई भी अभियान तब तक चल नही सकता जब तक उसकी कोई मंजिल न हो। जिस प्रकार केवल संघर्ष करने की खातिर कोई फलप्रद संघर्ष नही हो सकता, उसी प्रकार केवल साक्षरता की खातिर निरक्षरता के उन्मूलन का अभियान सफलतापूर्वक नहीं चलाया जा सकता। लोगों को कोरी साक्षरता प्राप्त करने के लिए राजी नही किया जा सकता। लेनिन इस बात को जानते थे और इसीलिए उन्होंने जनता के सामने वह महान लक्ष्य और आदर्श रखा जिसे वह साक्षरता के माध्यम से पूरा करना चाहते थे, अर्थात् समाजवाद का निर्माण और एक नयी समाजवादी संकृति का सृजन, जिसमे ज्ञान की उपलब्धियों मे प्रत्येक व्यक्ति को बराबर का हिस्सा मिल सकता हो।

महान क्रान्ति का सूत्रपात शासक अल्पमत द्वारा जन-साधारण के आर्थिक शोषण के विरुद्ध मुख्यत: एक प्रतिरोध के रूप मे हुआ था, और उसका लक्ष्य था आर्थिक शोषण, धार्मिक उत्पीड़न और सामाजिक गुलामी से उन्हे मुक्ति दिलाना। यद्यपि समाजवाद प्रमुखत: आर्थिक सिद्धान्त था, परन्तु प्रत्यक्ष तथा परोक्ष दोनो ही रूपों में शिक्षा पर उसका गहरा तथा बुनियादी प्रभाव पडना अनिवार्य था। "जिसे हम वैचारिक संकल्पना कहते हैं वह स्वय आर्थिक आधार पर अपनी प्रतिक्रिया करती है और कुछ सीमाओ के अन्दर उस आर्थिक आधार को बदल भी सकती है" (ब्लाकेन बर्ग के नाम एंगेल्स का २७ अक्तूबर, १८९० का पत्र, कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंगेल्स, पत्र-व्यवहार १८४६-१८९५, पृष्ठ ४८२)। मार्क्स-वाद के अनुसार, कुछ सीमाओं के भीतर 'शिक्षा' आर्थिक आधार को बदल

सकती है और द्वन्द्वात्मक रूप से क्रांति के ध्येय में योगदान कर सकती है। शिक्षा को अत्यधिक महत्वपूर्ण शक्ति माना गया जिसमे समाज के स्वरूप तथा स्वभाव को बदल देने की शक्ति थी। "मार्क्सवाद मनुष्य के मस्तिष्क को एक ऐसा सक्रिय सिद्धान्त मानता है जो न केवल आर्थिक आधार के उद्दीपन पर अपनी प्रतिक्रिया प्रकट करता है, बल्कि वह एक ऐसी उत्पादक शक्ति भी है जिसमें 'अनेक उदाहरणों में समाज की अर्थ-व्यवस्था के विकास की दिशा को मोड़ देने की भी क्षमता होती है" (सोवियत शिक्षा, मारिस शोर, पृष्ठ ३३)।

शिक्षा का स्तर किसी भी जनता के सांस्कृतिक विकास का सच्चा मापदड होता है। जनव्यापी निरक्षरता इस बात का सकेत हो सकती है कि सांस्कृतिक स्तर अत्यन्त नीचा है। इस माण्दड से नापा जाये तो अक्तूबर क्रांति के दिन सोवियत जनता के सांस्कृतिक विकास के स्तर को 'बेहद नीचा' और समाजवाद के निर्माण के लिए सर्वथा अपर्याप्त मानना होगा। हमारी क्रांति मे लेनिन ने लिखा, "अगर समाजवाद के निर्माण के लिए संस्कृति कें एक स्तर विशेष की आवश्यकता है,...तो हम अपने काम की शुरुआत इस प्रकार क्यों नहीं कर सकते कि पहले हम क्रांतिकारी ढंग से सस्कृति के उस स्तर विशेष के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ उत्पन्न कर दें...।" जिन लोगों को जारशाही के जमाने में बौद्धिक अन्धकार तथा अज्ञान की स्थिति में रखा गया था, उन्हें शीघ्र ही संस्कृति के क्षेत्र मे प्रवेश दिलाना था ताकि वे समाजवाद के सक्रिय निर्माता बन सकें। सांस्कृतिक क्रांति को समाजवादी निर्माण के लिए नितान्त आवश्यक माना गया। सांस्कृतिक क्रान्ति के व्यावहारिक साधन ये थे : "प्रौढ जनसंख्या के बीच निरक्षरता का उन्मूलन, स्कूल जाने की आयु के सभी बच्चों के लिए शिक्षा की व्यवस्था, सभी जातियो के मेहनतकश लोगो के सांस्कृतिक स्तर को ऊँचा उठाना और एक सच्चे जनता के बुद्धिजीवी वर्ग का निर्माण" (लेनिन एण्ड पब्लिक एजुकेशन, पृष्ठ ४७)।

समाजवाद के निर्माण के लिए लेनिन ने अपने कार्यक्रम में तीन बुनियादी सिद्धान्त निर्धारित किये थे : पूरे देश का उद्योगीकरण, कृषि का

सामूहिकीकरण और सांस्कृतिक क्रांति। हालांकि पहले दो का तीसरे पर प्रभाव पड़ना अनिवार्य था, परन्तु स्वयं उन दोनों की सफलता तीसरे पर, अर्थात् सांस्कृतिक क्रांति पर निर्भर थी। समाजवादी उद्योग तथा कृषि को विकसित सामाजिक चेतना रखने वाला मनुष्य ही व्यावहारिक रूप दे सकता था। *समाजवादी शिक्षा के बिना कोई भी व्यक्ति न तो* कुशल ढंग से समाजवादी उद्योगों की व्यवस्था चला सकता था और न ही सामूहिक फार्म चला सकता था। देश के समाजवादी उद्योगीकरण और वैज्ञानिक ढग से कृषि के विकास के लिए प्रशिक्षित तथा पढ़े-लिखे कार्यकर्ताओं की एक पूरी सेना की आवश्यकता थी। सर्वहारा वर्ग और किसानों को स्वयं अपने बीच से *इंजीनियर, तकनीशियन, वैज्ञानिक, अर्थशास्त्री तथा* कृषिवेत्ता पैदा करने थे। साक्षरता के बिना जन-साधारण यह काम नहीं कर सकते थे। साक्षरता एक आवश्यकता बन गयी और विकासशील समाजवादी अर्थतन्त्र का अभिन्न अंग हो गयी। लेनिन साक्षरता को देश के आर्थिक विकास का एक बुनियादी हिस्सा मानते थे। कार्योन्मुख साक्षरता से अनेक आर्थिक लाभ उत्पन्न करने की अपेक्षा की जाती थी: व्यक्ति के लिए अधिक उत्पादनशीलता और उसके फलस्वरूप अधिक मजदूरी या खेती की पैदावार में अधिक हिस्सा; औद्योगिक प्रतिष्ठान के लिए, अधिक उत्पादन और अधिक लाभ; *सामूहिक फार्म के लिए, अधिक* फसल और उत्पादन; और राष्ट्र के लिए, कुल राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि।

लेनिन की मान्यता थी कि सामाजिक विकास की हर अवस्था मे मजदूर वर्ग के सामान्य राजनीतिक उद्देश्यों के साथ शिक्षा का घनिष्ठ *सम्बन्ध होना चाहिये। अपनी क्रान्तिकारी गतिविधियों के आरम्भ में* १८९५ मे उन्होंने लिखा था: "ज्ञान के बिना मजदूर असहाय रहते है, ज्ञान रहने पर वे शक्ति बन जाते है।" उन्होने बताया कि अपने भौतिक आधार से अलग शिक्षा का कोई अधिक मूल्य नही रह जाता और यह कि उसे स्वतः कोई उद्देश्य समझना गलत है। मार्क्स के सिद्धान्त के अनुसार शिक्षा सामाजिक सम्बन्धों से निर्धारित होती है और अन्तिम

विश्लेषण में उत्पादन के भौतिक साधनों पर निर्भर करती है। लेनिन ने इस सिद्धान्त को दूसरी ओर से लागू करते हुए यह नियम स्थापित किया कि बुनियादी तौर पर शिक्षा सामाजिक सम्बन्धो को निर्धारित करती है और उत्पादन को प्रभावित करती है, और इस प्रकार उसे आवश्यक रूप से समाजवादी निर्माण का आधार होना चाहिये। जो लोग अन्धविश्वास तथा पस्तहिम्मती का शिकार हों और धर्म तथा "जनता को भ्रम में रखने वाले ऐसे ही अन्य मादक पदार्थो" के निराशा उत्पन्न करने वाले प्रभाव में काम करते हों, वे नये समाज का निर्माण करने मे स्वाभाविक रूप से असमर्थ होगे।" लेनिन ने आग्रहपूर्वक कहा, "आप निरक्षर जनता के सहारे साम्यवादी राज्यसत्ता का निर्माण नही कर सकते।" सांस्कृतिक क्रान्ति अब ऐश्वर्य नही रह गयी थी बल्कि अपरिहार्य आवश्यकता बन चुकी थी। देश को राजनेताओं और राजनीतिक रूप से सजग बुद्धिजीवियो की आवश्यकता थी जो उसे साम्यवाद के लक्ष्य की ओर आगे बढा सकें। उन्होने आग्रहपूर्वक शिक्षा के क्रान्तिकारी पुनर्गठन पर जोर दिया।

लेनिन साक्षरता को सांस्कृतिक क्रांति लाने का एक महत्वपूर्ण उपकरण मानते थे। सर्वहारा वर्ग की विजय के बाद बोल्शेविक पार्टी ने सार्वजनिक शिक्षा को वह काम पूरा करने का भार सौंपा "जो १९१७ की अक्तूबर क्रांति से आरम्भ हुआ था, अर्थात् स्कूलों को पूंजीपति वर्ग के वर्ग-शासन के साधन से बदल कर उस शासन का तख्ता उलट देने और समाज के वर्गों में विभाजन को पूरी तरह खत्म कर देने का साधन बना देने का काम।" शिक्षा का राजनीतिक महत्व शिक्षा के बारे में प्रथम अखिल-रूस कांग्रेस में लेनिन के भाषण से स्पष्ट हो जाता है, जिसमें उन्होंने कहा था : "हम कहते हैं कि शिक्षा के क्षेत्र में हमारा काम पूंजीपति वर्ग का तख्ता उलट देने के संघर्ष का ही एक हिस्सा है। हम खुले आम घोषणा करते हैं कि जिस शिक्षा का जीवन और राजनीति से संबंध न हो वह भूठ और मक्कारी के अतिरिक्त कुछ नही है।" शिक्षा को समाज के क्रान्तिकारी पुनर्गठन का, समाजवाद के निर्माण का और नयी समाज-

व्यवस्था की विजय के लिए काम करने वाले सक्रिय योद्धाओं के प्रशिक्षण का साधन माना गया। निरक्षरता का उन्मूलन इस दिशा में पहला कदम था।

१९१७ की क्रान्ति जनता के सामने यह सिद्ध कर देने में सफल रही थी कि सच्ची सत्ता जनता के हाथों में है, कि अतीत को दफन कर दिया गया है और भविष्य मेहनतकश जनता के हाथों मे है। उसने लोगों में यह आभास भी पैदा कर दिया था कि उनके पिछड़ेपन का मुख्य कारण उनका अज्ञान और शिक्षा का अभाव है और यह कि भविष्य को उज्ज्वल बनाने के लिए जनव्यापी साक्षरता की शर्त को पहले पूरा करना नितान्त आवश्यक है। सोवियत निरक्षरता-विरोधी अभियान का उद्देश्य नयी समाजवादी संस्कृति का निर्माण करना था जिस पर महान क्रान्ति की अन्तिम विजय निर्भर थी।

निरक्षरता-विरोधी अभियान का उद्देश्य यह था कि मेहनतकश जनता देश की अर्थ-व्यवस्था तथा राजनीति में पूरी तरह और प्रभावशाली ढंग से भाग लेकर अपने भविष्य पर स्वयं अपना नियंत्रण रखे। इस अभियान का उद्देश्य धनवानों की इजारेदारी को समाप्त करके शिक्षा तथा ज्ञान को समान रूप से हर व्यक्ति की पहुँच के अन्दर लाना था। लेनिन ने लिखा, "मेहनतकश लोग ज्ञान के भूखे हैं क्योंकि उन्हें अपनी विजय के लिए इसकी आवश्यकता है। मेहनतकश लोगों मे दस मे से नौ इस बात को समझ चुके हैं कि मुक्ति के लिए उनके संघर्ष मे ज्ञान एक अस्त्र है, कि उनकी असफलताओं का कारण शिक्षा का अभाव है, और यह कि अब यह वास्तव में उन्ही पर निर्भर है कि वे शिक्षा को सबकी पहुँच के अन्दर लायें।" इसके पीछे जो प्रेरक शक्ति थी वह इतनी सराहनीय, इतनी सशक्त और इतनी बलवती थी कि पूरा राष्ट्र उसके साथ हो गया और इससे निरक्षरता-विरोधी अभियान को क्रान्ति की प्रतिष्ठा और तूफान जैसा वेग तथा शक्ति प्राप्त हुई।

# अध्याय ५

## शिक्षा का लोकतंत्रीकरण

समाजवादी निर्माण के क्षेत्र में लेनिन का एक सबसे सशक्त विचार शिक्षा का लोकतन्त्रीकरण था। शिक्षा-सम्बन्धी लोकतन्त्र का प्रथम सिद्धांत निःशुल्क और अप्रतिबन्धित सार्विक शिक्षा का सिद्धान्त है। यह 'शिक्षा के ऐसे राजमार्ग' की स्थापना पर निर्भर है जो सभी के लिए उन्मुक्त हो। शिक्षा-सम्बन्धी लोकतन्त्र का अर्थ है व्यापक राजमार्ग न कि ऐसा संकरा मार्ग, जो केवल कुछ गिने-चुने नागरिकों के लिए ही खुला हो। समाजवादी क्रान्ति के प्रवर्तकों तथा अग्रदूतों ने हमेशा एक व्यापक राजमार्ग की पैरवी की थी जिस बूढ़े और बच्चे सभी कोई शुल्क दिए बिना या कोई लाइसेंस लिये बिना चल सकें। उनका विश्वास था कि जन्मत: सभी लोग बराबर होते हैं और बच्चे के भविष्य का निर्धारण उसके जन्म से नहीं बल्कि उसके परिवेश से होता है और हर नागरिक को शिक्षा के समान अवसर प्राप्त करने का अधिकार है।

अक्तूबर १८४७ में एंगेल्स ने मार्क्सवाद की शिक्षा-सम्बन्धी आकांक्षाओं का निरूपण इस में किया था:

(क) सार्विक शिक्षा,

(ख) ज्यों ही बच्चा हर समय माँ की देखभाल जैसे दूध पिलाने आदि की आवश्यकता पर निर्भर रहने से मुक्त हो जाये, त्यों ही शीघ्रातिशीघ्र उसकी शिक्षा आरम्भ कर दी जायें;

(ग) राष्ट्रीय संस्थाओं में राष्ट्र के खर्च पर शिक्षा की व्यवस्था;

(घ) औद्योगिक श्रम के साथ शिक्षा का संयोजन।

कम्युनिस्ट घोषणापत्र में १८४८ में मार्क्स तथा एंगेल्स ने साम्यवादी समाज में शिक्षा के सिद्धान्तों का निर्धारण इस रूप में किया: "निःशुल्क

सार्वजनिक शिक्षा। भौतिक उत्पादन के साथ शिक्षा का संयोजन, इत्यादि, इत्यादि।"

पेरिस मे कम्यून की मांग थी : "नि:शुल्क, धर्म-निरपेक्ष तथा एकाकार शिक्षा"; "सभी के लिए अनिवार्य धर्म-निरपेक्ष प्राथमिक शिक्षा।"

परन्तु मार्क्स तथा एंगेल्स के इन स्वप्नों को महान अक्तूबर क्रान्ति के बाद लेनिन ही साकार कर सके।

निरक्षरता के उन्मूलन के बारे मे सोवियत राज्यसत्ता के सकारात्मक कार्यक्रम की जानकारी १ नवम्बर १९१७ को प्रकाशित **रूस के सभी नागरिकों से शिक्षा के जन-कमिसार की अपील : सार्वजनिक शिक्षा के विषय में** नामक दस्तावेज मे प्राप्त की जा सकती है। इस अपील मे घोषणा की गयी थी कि पुरानी शोषण व्यवस्था के एक अवशेष के रूप में निरक्षरता तथा अज्ञान के विरुद्ध संघर्ष सोवियत व्यवस्था द्वारा किये जाने वाले शिक्षा-सम्बन्धी कार्य का एक बुनियादी काम है। सभी को साक्षर बनाने और यथासम्भव अल्पतम अवधि मे नि:शुल्क, सार्विक, अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इस काम को पूरा करने के लिए यह अनिवार्य समझा गया कि आधुनिक शिक्षा की सभी आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता रखने वाले स्कूलो की एक सुदृढ व्यापक व्यवस्था की स्थापना की जाये और रूस की विशाल जनसंख्या को शिक्षा देने के लिए पर्याप्त संख्या मे अध्यापक प्रशिक्षित किये जायें। यह घोषणा की गयी कि एक सच्ची लोकतान्त्रिक सत्ता के रूप में सोवियत राज्यसत्ता सार्वजनिक शिक्षा की प्राथमिक अवस्था तक ही पहुँचकर रुक नही जायेगी, बल्कि एक ऐसी अविकल धर्म-निरपेक्ष स्कूल-प्रणाली संगठित करने की योजना भी बनायेगी, जो उदीयमान पीढी को उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र मे प्रवेश का अवसर प्रदान कर सके। यह भी घोषणा की गयी कि इसके साथ ही प्रौढ शिक्षा का काम और इसी प्रकार हर तरह का शैक्षिक तथा सांस्कृतिक काम जन-व्यापी पैमाने पर आरम्भ किया जायेगा। सार्वजनिक शिक्षा सामाजिक निर्माण के क्षेत्र मे जनता द्वारा प्राप्त किये गये अनुभव पर आधारित

होगी। अपील में इस बात पर जोर दिया गया था कि सोवियत सत्ता इन उच्च उद्देश्यो को देश के अध्यापकों की सहायता से पूरा करेगी, जिन्हें सोवियत समाज के साथ सहयोग करने की कोशिश करना चाहिये; और दूसरी ओर सरकार को अध्यापको के भौतिक कल्याण मे सुधार करने की कोशिश करनी चाहिये।(लेनिन एण्ड पब्लिक एजुकेशन, पृष्ठ १९-२०)। १९१९ मे लेनिन ने निर्देश जारी किया कि नयी समाजवादी संस्कृति के एक अंग के रूप में साक्षरता को, और उसके सामान्य शिक्षा को जन-साधारण तक पहुंचाया जाये। कम्युनिस्ट पार्टी ने १८ से २३ मार्च, १९१९ तक मास्को में अपनी आठवी कांग्रेस में शिक्षा-सम्बन्धी कार्यक्रम के जो मोटे-मोटे सिद्धान्त स्वीकार किये थे इस प्रकार थे :

"मजदूरों और किसानों की आत्म-शिक्षा और बौद्धिक विकास के लिये केन्द्रीय सरकार की ओर से सहायता (स्कूलों के बाहर शिक्षा के लिए विभिन्न संस्थाओ की प्रणाली की स्थापना, जैसे पुस्तकालय, प्रौढों के लिए स्कूल, जन-प्रासाद तथा विश्वविद्यालय, व्याख्यानों का पाठ्यक्रम, सिनेमा, अध्ययन, इत्यादि)।

"१७ वर्ष तक की आयु के सभी लड़कों तथा लड़कियो के लिए निःशुल्क तथा अनिवार्य सामान्य तथा तकनीकी शिक्षा (उत्पादन की प्रमुख शाखाओं के सिद्धान्त तथा व्यवहार की शिक्षा) की व्यवस्था।"

"समरूप औद्योगिक श्रम स्कूल के सिद्धान्त का पूरी तरह क्रियान्वयन जहाँ शिक्षा मातृभाषा में दी जाये, लड़के तथा लड़कियाँ धार्मिक प्रभावों से सर्वथा मुक्ति रहकर साथ-साथ शिक्षा प्राप्त करें, ऐसे स्कूल जहाँ शिक्षण का सामाजिक दृष्टि से उपयोगी श्रम के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध हो और जो साम्यवादी समाज के सदस्य तैयार करें।"

"सभी छात्रो के लिए सरकार के खर्च पर खाने, कपडो, जूतों और स्कूल मे काम आने वाली हर सामग्री की व्यवस्था।"

"श्रमिक जन-साधारण को शिक्षा के काम मे सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए लाना (सार्वजनिक शिक्षा परिषदों का विकास, शिक्षित लोगों को इस काम में लगाना, इत्यादि)।"

"१७ वर्ष से अधिक आयु के लोगों के लिए बहुकौशली ज्ञान के प्रसंग मे व्यवसायिक शिक्षा का बड़े पैमाने पर प्रसार।"

"स्कूल से पहले की शिक्षा के लिए नर्सरियों, किंडरगार्टेनों आदि की एक प्रणाली की स्थापना ताकि स्त्रियों के सामाजिक विकास में सुधार हो सके और उनको मुक्ति करने मे सहायता मिल सके।"

अन्त मे, जाति, भाषा, रोजगार के आधार पर किसी भेदभाव के बिना ८ से ५० वर्ष तक के सभी लड़कों तथा लड़कियों और स्त्रियों तथा पुरुषों के लिए साक्षरता को अनिवार्य घोषित करते हुए अध्यादेश जारी किया गया। ज्ञान प्राप्त करने पर धनवानों तथा विशेषाधिकार—प्राप्त लोगो की इजारेदारी खत्म कर दी गयी और शिक्षा सभी के लिए उपलब्ध कर दी गयी। सभी के लिए शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार स्वीकार किया गया। साक्षरता को लोकतान्त्रिक समानता का वस्तुपरक आधार स्वीकार किया गया और वैयक्तिक रूप से जनता को साक्षरता तथा शिक्षा का अधिकार प्रदान किया गया।

सोवियतों की पाँचवीं कांग्रेस में ११ जुलाई, १९१८ को रूसी संघ का जो संविधान, प्रथम सोवियत संविधान स्वीकार किया गया था उसमें शिक्षा-सम्बन्धी लोकतन्त्र के सिद्धान्त को सांविधानिक प्रतिष्ठा तथा कानूनी अभिव्यक्ति प्रदान की गयी। इस सविधान की १७वी धारा मे प्रावधान किया गया कि "शिक्षा तक श्रमिक जनता की वास्तविक पहुँच को सुनिश्चित बनाने के लिए रूसी समाजवादी संघात्मक सोवियत जनतन्त्र अपने सामने मजदूरो और गरीब किसानों को पूर्ण, सर्वतोमुखी शिक्षा नि:शुल्क प्रदान करने का लक्ष्य निर्धारित करता है।" शिक्षा प्रक्रिया का पुनर्गठन करके १७वी धारा मे निहित सिद्धान्तो को व्यावहारिक रूप दिया गया।

क्रांति के बाद के रूस की शिक्षा-सम्बन्धी नीति का केवल एक उद्देश्य था : समूचे देश के शैक्षिक स्तर को ऊँचा उठाना और प्रत्येक व्यक्ति को, कम से कम, साक्षर तो बना ही देना। शिक्षा के क्षेत्र में सभी लोगों के लिए प्रवेश के आश्वासन से सभी के लिए न केवल साक्षरता की बल्कि सभी

स्तरों पर निःशुल्क शिक्षा की भी गारन्टी हो गयी। किसी भी निरक्षर व्यक्ति को साक्षर बनने के लिए अपने समय और प्रयास के अतिरिक्त कुछ भी नही देना पड़ता था। सोवियत संघ शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश या शिक्षा प्राप्त करने के लिए जाति, नस्ल या सामाजिक पद के आधार पर किसी भी पुरुष या स्त्री के लिए किसी भी विशेषाधिकार अथवा प्रतिबन्ध को स्वीकार नही करता था। शिक्षा के लोकतन्त्रीकरण का उद्देश्य यह था कि शिक्षा केवल इने-गिने लोगों को विशेषाधिकार के रूप में न उपलब्ध रहकर सभी को एक अधिकार के रूप मे उपलब्ध हो। सोवियत सघ के सभी लोगो को सभी शिक्षा प्रतिष्ठानो मे प्रवेश पाने और एक जैसी शिक्षा पाने का समान अधिकार था।

पूरे सोवियत संघ मे सभी निरक्षरों को एक मापदड से नापा गया और सभी के साथ एक जैसा वर्ताव किया गया। सोवियत संघ में मन्त्री के बेटे या वेटी को उसी स्कूल में जाना पडता था जिसमे अकुशल मजदूर के बच्चे जाते थे। धनवानो के स्कूल और गरीबो की पाठशाला जैसा कोई भेद नही था। सभी स्कूल जनता के स्कूल थे जिनमें कोई फीस नही ली जाती थी। सभी में एक ही पाठ्यक्रम के अनुसार पढाई होती थी इस लोकतान्त्रिक प्रक्रिया से निरक्षरता-विरोधी पाठ्यक्रम की और विभिन्न कक्षाओं की पाठ्य-पुस्तकों की एक व्यापक ढंग की योजना वनाने में सहायता मिली। अध्यापकों के प्रशिक्षण मे भी सुविधा हुई। इस प्रक्रिया से यह लाभ था कि शिक्षण-कार्य सुनियोजित ढंग से किया जा सकता था और निरक्षरता को सुव्यवस्थित से ढंग क्रमशः दूर किया जा सकता था।

निरक्षरता को दूर करने की लोकतान्त्रिक प्रक्रिता समतल स्तर पर भी थी और ऊपर से नीचे की दिशा मे भी। ऊपर से नीचे की दिशा मे काम करते हुए ८ से ५० वर्ष तक की आयु के सभी व्यक्तियो को, और अलग-अलग सीमा तक साक्षर सभी लोगों को इस अध्यादेश की परिधि में ससमेट लिया गया। पूर्णतः निरक्षर और अर्ध-निरक्षर सभी को इसमे शामिल किया गया। समतल स्तर पर काम करते हुए इसमें सभी पुरुषों तथा स्त्रियों को और देश के विभिन्न भागों में रहने वाले लोगों को इसमें

शामिल किया गया। स्कूलों के द्वार समाज के सभी वर्गो के लोगों के लिए खोल दिये गये और साक्षरता का सदेश घर-घर पहुँचाया गया। निरक्षरता विरोधी अभियान के सैनिक सोवियत संघ के पूरे विस्तार मे हर वच्चे, स्त्री तथा पुरुष को शिक्षा देने के लिए गये, वह देश के किसी भी भाग मे रहता हो या उसकी स्थिति कुछ भी हो। स्त्रियो के लिए भी शिक्षा के वैसे ही अवसर उपलब्ध किये गये जैसे पुरुषों को उपलब्ध थे और स्त्रियो की शिक्षा भी उसी कोटि की थी जैसी पुरुषो के लिए थी। साक्षरता अभियान ने स्त्रियो को वरावर का स्थान दिया और उन्हें भी उन्ही निरक्षरता-विरोधी पाठ्यक्रमों के अनुसार शिक्षा दी जिनके अनुसार पुरुषो को दी जाती थी।

इस सिद्धांत का पालन करते हुए कि योग्यता निर्धारित करने में आनुवशिकता से अधिक महत्व परिवेश का होता है, वच्चों को अलग-अलग श्रेणियों मे केवल उनकी "आयु तथा क्षमता" के अनुसार बांटा जाता था, "वुद्धि के किसी तथाकथित स्तर" के आधार पर नही जैसा कि पूंजीवादी लोकतांत्रिक देशों मे किया जाता है। सोवियत सघ मे सभी वच्चों को वरावर समझा जाता था, उन्हे स्कूल मे एक ही जैसी शिक्षा दी जाती थी। इसी कारण प्रौढ लोगो के लिए निरक्षरता-विरोधी पाठ्यक्रम को अवधि के आधार पर कई चरणों में बाँट दिया गया था। निरक्षरता को दूर करने के लिए सभी प्रौढ लोगो के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाता था और उन सभी को एक जैसी शिक्षा दी जाती थी। सभी व्यक्तियों को एक ही जैसी निरक्षरता-विरोधी पाठ पढाकर शिक्षा तथा निरक्षरता-उन्मूलन के क्षेत्र मे लोकतात्रिक समानता का सिद्धान्त सफलतापूर्वक लागू किया गया।

शिक्षा-सम्वन्धी लोकतन्त्र का सिद्धान्त शिक्षा के माध्यम पर भी लागू किया गया और विभिन्न जातियो के लोगो को साक्षरता के पाठ रूसी भाषा मे भी पढाये जाते थे और स्वयं उनकी मातृ भाषा में भी। सभी राष्ट्रों की समानता के सिद्धान्त को संघ में सम्मिलित जनतन्त्रों पर लागू करने के फलस्वरूप विभिन्न जनतन्त्रो मे रहने वाले लोगों

को उनकी मातृ भाषा में साक्षरता के पाठ पढ़ाने के लिए उनकी मूल भाषा को अपनाना एक लोकतांत्रिक आवश्यकता बन गया। यह बहुत लाभप्रद सिद्ध हुआ और इससे सोवियत जनता को गैर-रूसी लोगों को रूसी भाषा सिखाने की कोशिश करने मे कोई भी समय नष्ट किये बिना समूचे देश से निरक्षरता दूर करने मे सहायता मिली। इससे रूसी तथा गैर-रूसी दोनों ही लोगो के बीच साथ-साथ साक्षरता के प्रसार में सहायता मिली।

सोवियत शिक्षा-नीति की विलक्षणता तथा बुद्धिमत्ता इस बात में इतनी अधिक परिलक्षित नहीं होती है कि साक्षरता को समाजवादी शिक्षा के कार्यक्रम मे शामिल कर लिया गया, जितनी कि इस बात में कि उसे सार्वत्रिक बना दिया गया। "सभी के लिए—" इन तीन शब्दों पर जोर देने से सारा अन्तर पड़ गया। इसने शिक्षा कार्यक्रम में सच्चे लोकतन्त्र के विचार का संचार किया, शिक्षा को इने-गिने विशेषाधिकार प्राप्त लोगों इजारेदारी से मुक्त कराया जायेगा और उसे हर सोवियत नागरिक तक पहुँचाया।

## अध्याय ६

# अभियान

सोवियत संघ मे निरक्षरता का उन्मूलन उस क्रमिक शिक्षा-प्रक्रिया द्वारा नही किया गया जो आम तौर पर पूंजीवादी समाज में अपनायी जाती है, *बल्कि सामाजिक निर्माण की क्रान्तिकारी प्रक्रिया के माध्यम* से किया गया। यदि उसने क्रमिक विकास की मन्द प्रक्रिया अपनायी होती तो अब भी अधिकांश लोग निरक्षर ही होते। क्रान्ति से पहले जिस गति से निरक्षरता दूर की जा रही थी उस गति से सोवियत संघ को *अपनी पूरी जनसंख्या को साक्षर बनाने मे कई शताब्दियाँ लगती।*

"प्रथम रूसी सामान्य जनगणना से, जो १८९७ मे की गयी थी, यह पता लगा कि रूस की २१·१ प्रतिशत जनसंख्या साक्षर थी, जबकि तुर्किस्तान मे साक्षरों की संख्या १ से २ प्रतिशत के बीच मे थी। यह बात लाक्षणिक है कि १९०६ तक रूस के योरुपीय भाग में साक्षरो की संख्या मे ४·२ प्रतिशत काकेशस में १·१ प्रतिशत साइबेरिया मे १·३ प्रतिशत और मध्य एशिया में केवल ०.४ प्रतिशत की वृद्धि हुई थी। सरकारी अनुमानों से यह पता चला कि उस जमाने की शिक्षा-प्रणाली के अन्तर्गत रूस के योरुपीय भाग में निरक्षरता को मिटाने में १२० वर्ष, काकेशस, तथा साइबेरिया में ४३० वर्ष और तुर्किस्तान मे ४,६०० वर्ष लगते (ए लीप थ्रू द सेंचुरीज सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी, फिदलोन, पृष्ठ २८२)। सांस्कृतिक क्रान्ति की प्रक्रिया के सहारे यह काम पच्चीस वर्ष से भी कम मे पूरा कर लिया गया।

निरक्षरता इतनी व्यापक थी कि उसे राष्ट्रीय विपदा मान लेने पर ही दूर करना संभव था। प्रत्येक व्यक्ति को साक्षर बनाने का

बच्चा-बच्चा जान गया कि 'लिकबेज़' (निरक्षरता-उन्मूलन के रूसी रूपांतर का लघु रूप) और 'कल्टपोखोद' (जनसख्या के व्यापक हिस्सों मे साक्षरता के प्रसार का अभियान) जैसे शब्दों का क्या अर्थ है। निरक्षरता को सामाजिक बुराई समझा जाने लगा, जिसे यदि निजी हाथों मे छोड़ दिया जाता तो वह नासूर का रूप धारण कर लेती, और इसीलिए उसे पूरे राष्ट्र की जिम्मेदारी बना दिया गया। सोवियत सत्ता की स्थापना के प्रथम कुछ महीनो के अंदर ही राष्ट्रव्यापी शिक्षा-अभियान छेड दिया गया। उसके तुरन्त ही बाद शिक्षा-जन-कमिसारियट ने सार्विक साक्षरता का जन-व्यापी अभियान संगठित किया।

समस्या इतनी बडी और इतनी जटिल थी कि उसे केवल सरकारी संस्थाओ के प्रयासों से हल नही किया जा सकता था। इसलिए निरक्षरता-विरोधी अभियान का आधार व्यापक बनाया गया और उसमे हर प्रकार के लोग खीचकर लाये गये। ट्रेड यूनियनों, युवकों तथा स्त्रियों के संगठनो और सभी स्वयसेवक सगठनों मे इस अभियान के प्रति रुचि जाग्रत हुई और वे इसमे सम्मिलित हुए। यंग कम्युनिस्ट लीग ने "हर साक्षर एक निरक्षर को पढाये" का नारा लेकर सास्कृतिक जिहाद छेड़ दिया। बाद मे इसे बदलकर निरक्षरो की सख्या दो और उसके बाद दस कर दी गयी।

कुल मिलाकर साक्षर लोगों के, और विशेष रूप से निरक्षरता-विरोधी कार्यकर्त्ताओं उत्साह तथा लगन की बदौलत ही बहुत बडी हद तक इस अभियान को सफलता मिली। उन्होने लेनिन के उस निर्णय के प्रति दृढ आस्था रखते हुए कि निरक्षर लोग साम्यवादी समाज का निर्माण नही कर सकते साम्यावाद के जिहादियो की तरह काम किया। इन कार्यकर्त्ताओ ने अपनी निष्काम सेवा-भावना के कारण अत्यंत विषम परिस्थितिओ मे काम किया। उन्होने सहर्ष विरोध तथा दमन का सामना किया और आवश्यकता पडने पर अकेले अपर्याप्त साधनों से और अरुचिकर परिस्थितिओं मे भी अभियान जारी रखा। यग कम्युनिस्ट लीग के सदस्यों ने अनथक काम किया और प्रबल युवा-शक्ति के कारण उनका

उत्साह अदम्य हो उठा। निरक्षरता-विरोधी अभियान का वेग बढ़ता गया और वस्तुतः उसने राष्ट्रीय आंदोलन का रूप धारण कर लिया। लेनिन का अध्यादेश किसी एक व्यक्ति की इच्छा नहीं रह गयी बल्कि उसकी चर्चा सभी के मुँह से होने लगी। हर सम्मेलन तथा कांग्रेस में निरक्षरता को मिटा देने का संकल्प बार-बार दोहराया गया और हर मंजिल पर उस संकल्प को पूरा करने के लिए कदम उठाये गये।

इस क्षेत्र को जनता का इतना व्यापक समर्थन मिला की हर जगह लोग दूसरों को पढ़ाने और स्कूलों का निर्माण करने के लिए बिना पैसा लिए, स्वैच्छिक सेवा करने को तैयार थे। अखबार यथा-शक्ति अपना पूरा योग देने के बारे में लोगों की शपथों से भरे रहते थेः "मैं अपनी तीन दिन दिन की मजदूरी निरक्षरता-विरोधी सोसायटी को दान करता हूँ", "मैं तीन निरक्षर लोगों को पढ़ाने का वचन देता हूँ", "सांस्कृतिक आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने की इच्छा से मैं तीन महीने के अन्दर ५० लोगों को शिक्षा देने और २० दिन के अन्दर २० छात्रों को निरक्षरता-विरोधी अभियान में काम करने के लिए तैयार करने का वचन देता हूँ।" ये सब केवल कोरे वादे नहीं थे, बल्कि इन्हें पूरा भी किया गया। इस अभियान को लोगों ने एक राष्ट्र-व्यापी घटना का महत्व दिया।

पेशेवर अध्यापक, हजारों छात्र, कारखानों तथा दफ्तरों के कर्मचारी, शोधकर्ता तथा वैज्ञानिक निरक्षरता के विरुद्ध इस अभियान में शामिल हुए। स्कूलों में पढ़ने वाले बड़े बच्चे भी मैदान में उतर पड़े। रूसी बुद्धिजीवी भी पीछे नहीं रहे और उन्होंने निरक्षरता के विरुद्ध लड़ने में अपनी प्रबल शक्ति लगा दी। इनमें मैक्सिम गोर्की, अलेक्सान्द्र सेराफि-मोविच तथा अलेक्सान्द्र नेवरोव जैसे लेखक, देम्यान बेदनी, व्लादिमिर मायाकोव्स्की तथा वालेरी ब्र्यूसोव जैसे कवि, मनोविश्लेषक-अकादमीशियन व्लादिमिर बेख्तेरेव और विभिन्न ज्ञान-क्षेत्रों के अन्य बहुत से लोग शामिल थे।

सोवियत संघ की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के अध्यक्ष मिखाइल कालिनिन की अध्यक्षता में १९२८ की शरद ऋतु में "निरक्षरता का

नाश हो" नामक एक जन-संस्था की स्थापना की गयी। इस सोसायटी के काम मे सक्रिय रूप से भाग लेने वालों में बोल्शेविक पार्टी के नाद्येज्दा क्रुप्सकाया, अनातोली लूनाचार्स्की, आंद्रेई बुवनोव और निकोलाई पोदवोइस्की जैसे प्रमुख नेता शामिल थे। इस सोसायटी ने अपनी स्थापना के तुरन्त ही बाद राष्ट्रव्यापी स्वरूप धारण कर लिया और १९२५ तक इसके सदस्यो की सख्या १६ लाख और १९३२ मे ५० लाख से अधिक हो चुकी थी।

इस सोसायटी ने अपने कार्यक्रम को बड़ी तेजी से आगे बढ़ाया तथा अधिक विस्तृत बनाया। उसने हजारो सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को अध्यापक बनने का प्रशिक्षण दिया। जिन लोगों ने शिक्षकों की इस सेना मे प्रवेश किया उनमे केवल अध्यापक ही नही बल्कि विविधतम व्यवसायो के लोग थे: डाक्टर, कृषिवेत्ता, इंजीनियर, लाइब्रेरियन, अभिनेता, सरकारी कर्मचारी, उच्च कक्षाओ के विद्यार्थी और माध्यमिक स्कूलों के छात्र।

निरक्षरता-विरोधी अभियान के काम के लिए सोसाइटी को विपुल धनराशि की आवश्यकता थी। सदस्यो से जो चन्दा मिलता था वह सर्वथा अपर्याप्त था। सार्वजनिक संगठनो ने आगे बढ़कर इस कमी को पूरा करने मे हाथ बँटाया। औद्योगिक सहकारी समितियों, ग्राम संघों, शहरों के बड़े-बड़े प्रतिष्ठानो तथा संस्थाओ ने अपने बजट का एक हिस्सा कर्मचारियों तथा मजदूरो के बीच निरक्षरता-विरोधी काम के लिए दान कर दिया। अनेक सामूहिक तथा सरकारी फार्मों ने पाठ्य-पुस्तकें, कापियाँ और पेंसिलें खरीदने के लिए अपने कुछ खेतो की पैदावार दान कर दी।

ट्रेड यूनियन भी पीछे नही रहे और उन्होने 'सास्कृतिक अभियान' पर काफी पैसा खर्च किया। ट्रेड यूनियन सास्कृतिक कामो के लिए कुल जितना पैसा बचाते थे उसका आधा निरक्षरता के विरुद्ध लड़ने के लिए दे दिया जाता था। व्यक्तिगत रूप से भी मजदूरो ने फैक्ट्रियों मे ओवरटाइम काम करके इसमें योगदान किया और इस प्रकार जो अतिरिक्त माल तैयार होता था उसकी बिक्री की आमदनी निरक्षरता-विरोधी निधि मे दे दी जाती थी। इसी प्रकार खेतो पर काम करने वालो ने कुछ खेत

अलग कर दिये थे जिन पर सामूहिक रूप से काम करने के फलस्वरूप प्राप्त होने वाली फसल की बिक्री की आमदनी निरक्षरता के विरुद्ध लड़ने के लिए स्थानीय स्कूल को दे दी जाती थी।

सिनेमाघरों, थिएटरों तथा मनोरंजन के अन्य स्थानों में विशेष कार्यक्रमों का आयोजन किया गया और उससे जो आमदनी हुई वह निरक्षरता-विरोधी निधि मे दे दिया गया।

देश के अर्थतन्त्र के पुनरुत्थान तथा विकास के साथ ही सरकार की स्थिति मे भी सुधार हुआ और वह इस आन्दोलन के लिए अधिक धन दे सकी। उसने शिक्षा के लिए अधिकाधिक धन की स्वीकृति दी। सरकार की ओर से शिक्षा के लिए जो रकम मंजूर की गयी उसका काफी बड़ा भाग प्रौढ़ो के बीच निरक्षरता दूर करने पर खर्च किया गया। जनता तथा सरकार के सर्वतोमुखी प्रयास की बदौलत साक्षरता के माध्यम से लाखों सोवियत प्रौढ़ों तथा बच्चों तक ज्ञान पहुँचाने के लिए पर्याप्त धनराशि उपलब्ध की गयी।

अभियान को और तेज करने के लिए जून १६२० में निरक्षरता के विरुद्ध अखिल-रूस अतिविशिष्ट आयोग की स्थापना की गयी। इसका उद्देश्य शिक्षकों को संगठन-सम्बन्धी तथा प्रविधि-सम्बन्धी काम मे सहायता देना भी था। विभिन्न प्रदेशों, नगरो तथा अंचलों में भी इसी प्रकार के अतिविशिष्ट आयोगों की स्थापना की गयी। इन आयोगों ने [illegible] निरक्षर व्यक्ति को स्कूल मे लाने का काम पूरा किया।

इन आयोगो के अतिरिक्त कम्युनिस्ट पार्टी, सरकारी [illegible] सार्वजनिक संगठनों के प्रतिनिधियो के 'तीन-सदस्यीय [illegible]' [illegible] परगने और गांव में, और हर औद्योगिक प्रतिष्ठान [illegible] मे स्थापित किये गये। इन आयोगों के जिम्मे [illegible] संगठनात्मक कार्य का निरीक्षण करना था। [illegible] के अधिकार दिये गये थे।

(क) सभी निरक्षरो तथा [illegible]।

(ख) इस बात का प्रबन्ध [illegible]

## अध्याय ७

# केंद्रित निरीक्षण, विकेंद्रित गतिविधियाँ

यह बात अकारण नहीं थी कि लेनिन का "केन्द्रित निरीक्षण तथा विकेन्द्रित गतिविधियों" का सिद्धान्त शिक्षा के क्षेत्र पर भी लागू किया गया, जिसमे निरक्षरता के उन्मूलन का अभियान भी शामिल था। आधी से अधिक (५० प्रतिशत) जनसख्या गैर-रूसी जातियों की थी और उनमे से अधिकांश रूस के भूतपूर्व जारशाही साम्राज्य के सुदूरवर्ती क्षेत्रों मे रहती थी। ये लोग हर जगह बिखरे हुऐ थे, कहीं बड़े-बड़े समुदायो मे और कही छोटे-छोटे समूहों मे। उनके बीच न केवल भाषा का अन्तर था बल्कि उन के सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक विकास के स्तर में भी अन्तर था। कुछ अर्ध-पूंजीवादी स्तर तक पहुँच गये थे, कुछ अभी पूँजीवादी विकास की प्रारम्भिक अवस्था में ही थे, और कुछ ऐसे भी थे, जो अभी तक प्राय: सामन्ती समाज मे ही रह रहे थे, जहाँ अब तक पितृ-सत्तात्मक कबीलों के सामन्ती सम्बन्धों का बोलबाला था। कहीं-कहीं औरतो को बाहर निकलने की इजाजत थी, लेकिन कहीं-कहीं उनके कोई सास्कृतिक अधिकार नही थे, वे बेहद पिछड़ी हुई थीं और बुर्के मे रहती थीं। भाषा के क्षेत्र में कितनी ही प्रकार की भाषाएँ और बोलियाँ प्रचलित थी, जिनमें से कुछ की तो वर्णमाला और लिपि भी नहीं थी। हर जगह अलग-अलग हद तक निरक्षरता फैली हुई थी। समस्या उसे देश के हर कोने से दूर करने और हर व्यक्ति को पढ़ाने की थी। सोवियत सरकार को जिन नाना प्रकार की परिस्थितियों का सामना करना पड़ रहा था उनमें यह काम केन्द्रित निरीक्षण और विकेन्द्रित गतिविधियों का सिद्धान्त लागू किये बिना नही पूरा किया जा सकता था।

दिसम्बर १९२२ मे विभिन्न जनतन्त्रों को मिलाकर पूर्ण समानता

के आधार पर सोवियत समाजवादी जनतन्त्र की स्थापना की गयी। किसी भी जनतन्त्र में रहने वाले लोगो को कोई विशेष अधिकार नही प्राप्त थे, वल्कि इसके विपरीत प्रत्येक व्यक्ति को साक्षरता के बराबर और एक जैसे अधिकार मिले हुऐ थे। संघ मे सम्मिलित छोटे-बड़े सभी जनतन्त्रो पर जनता को व्यवहार मे साक्षर बनने के समान अवसर प्रदान करने की जिम्मेदारी थी। यद्यपि विभिन्न लोगों के विशेष रूप से स्त्रियों के, सांस्कृतिक तथा सामाजिक स्तरो मे अन्तर को देखते हुए उनकी ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता थी, परन्तु निरक्षरता मिटाने की बुनियादी नीति या पूरे सघ के विस्तार मे एक जैसा ही रहना आवश्यक था। रूस मे बसने वाली जातियो के अधिकारो की घोषणा मे बराबरी तथा उन्मुक्त आत्म-निर्णय के अधिकार के आश्वासन के अतिरिक्त रूस में बसने वाली "अल्पसख्यक जातियों तथा जातीय समुदायो के उन्मुक्त विकास" की भी गारन्टी की गयी थी। निरक्षरता-उन्मूलन सभी का समान ध्येय तथा समान दायित्व माना गया था। इसके लिए एक समरूप बुनियादी ढांचे की आवश्यकता थी, जिसमे केवल स्थानीय परिस्थितियो के अनुसार थोड़ा-बहुत परिवर्तन किया जा सकता था।

प्रथम सविधान मे रूसी सोवियत सघात्मक समाजवादी जनतन्त्र को पूर्ण, सार्विक तथा नि.शुल्क शिक्षा प्रदान करने का दायित्व सौंपा गया था। १९२४ के दूसरे सविधान मे शिक्षा-सम्बन्धी मामलात को सोवियत संघ मे सम्मिलित विभिन्न राजनीतिक इकाइयो को सौंप दिया गया। "सार्वजनिक शिक्षा के सामान्य सिद्धान्तो का निरूपण" सोवियत संघ की सर्वोच्च सत्ता-सस्थाओ के हाथ में रहा परन्तु संघ में सम्मिलित प्रत्येक जनतन्त्र को स्वयं अपना "शिक्षा जन-कमिसार" रखने का अधिकार दे दिया गया। परन्तु केन्द्रीय नियत्रण बना रहा; सार्वजनिक शिक्षा के सामान्य सिद्धान्तों का निर्धारण केन्द्रीय सत्ता-सस्थाओ के हाथ में था और संघ की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति या उसका अध्यक्ष-मंडल किसी भी जनतन्त्र के शिक्षा जन-कमिसार की जारी की हुई आज्ञा या अध्यादेश को रद्द कर सकता था। १९३६ के तीसरे सविधान मे "शिक्षा तथा

सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्रों में मूलभूत सिद्धान्तों का निर्धारण" संघ की केन्द्रीय शासनतन्त्र के अधिकार-क्षेत्र मे शामिल कर दिया गया।

परन्तु केन्द्रीय शासनतन्त्र के निर्धारित किये हुए सामान्य तथा आधारभूत सिद्धान्तों को व्यवहार मे पूरा करना 'संघ में सम्मिलित जनतन्त्रों का काम' था। व्यवहार मे उन नीतियों पर नियंत्रण रखना तथा उन्हें लागू कराना उनकी जिम्मेदारी थी। सामान्य शिक्षा के सभी स्कूल— प्राथमिक तथा माध्यमिक स्कूल, प्रौढ़ों के स्कूल, युवा औद्योगिक तथा कृषि मजदूरो के स्कूल, बालगृह, विशेष स्कूल और स्कूलों के अतिरिक्त अवकाश, मनोरजन अथवा सांस्कृतिक गतिविधियो के अन्य प्रतिष्ठान— जनतन्त्र के मन्त्रालय के आधीन काम करते थे।

स्थानीय रूप से शिक्षा का निरीक्षण सोवियतो की नियुक्त की हुई समितियाँ करती थी।

मास्को मे सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी सोवियत संघ की मन्त्रि-परिषद के आधीन है और अनेक सस्थाओं के काम का संचालन करती है, जिनमें सग्रहालय, शोध प्रयोगशालाएँ तथा वैज्ञानिक आयोग शामिल है। रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतन्त्र के बाहर सघ के दूसरे जनतन्त्रों की अपनी विज्ञान अकादमियाँ जो इसी उद्देश्य को पूरा करती है।

क्रांति के बाद सभी प्राइवेट स्कूल बन्द कर दिये गये और स्कूलों की एक ही सरकारी व्यवस्था आरम्भ की गयी जिससे सभी के लिए एक जैसी शिक्षा का आश्वासन हो गया। सभी सस्थाओं के राज्यसत्ता के नियत्रण तथा मार्गदर्शन मे चलने के परिणामस्वरूप कुशल नियोजन, भौतिक सुरक्षा तथा निरन्तरता सुनिश्चित हो गयी। इससे असंगठन की, निजी अथवा सार्वजनिक, खैरात पर निर्भरता की, या इस बात की कोई सम्भावना नही रह गयी कि स्कूलों को वाणिज्यिक, धार्मिक अथवा अन्य शिक्षेतर उद्देश्यो के लिए इस्तेमाल किया जाये।

निरक्षरता अभियान पर राज्यसत्ता के नियत्रण से यह लाभ हुआ कि समस्या का समाधान सुगम हो गया। स्वतन्त्र स्कूलो की निगरानी

तथा उनके मार्गदर्शन से सम्बन्धित कोई प्रशासनिक पेचीदगी नहीं रह गयी। सभी स्कूलों की व्यवस्था राज्यसत्ता या स्थानीय अधिकरणों के हाथ में थी और वे सभी सार्वजनिक निरीक्षण तथा प्रशासन के एक जैसे नियमों का पालन करते थे। अपने व्यापक साधनों के कारण राज्यसत्ता इसके लिए बेहतर स्थिति में थी कि वह हर नागरिक को शिक्षा देने के लिए, उसके या उसके स्थानीय निकाय के आर्थिक साधन कुछ भी हों, पर्याप्त संख्या में संस्थाएँ स्थापित कर सके।

सोवियत शिक्षा-पद्धति, जिसमें निरक्षरता-विरोधी अभियान भी शामिल था, आरम्भ से ही लोकतान्त्रिक केन्द्रीयतावाद के सिद्धान्त पर आधारित थी, अर्थात् उसमें केन्द्रीय मार्गदर्शन को स्थानीय निकायों की स्वतन्त्र गतिविधियों तथा व्यापक सार्वजनिक सहयोग के साथ संयोजित कर दिया गया था। राज्यसत्ता स्कूल चलाती थी, पाठ्यक्रम, पाठ्य-पुस्तकें तथा अध्यापन-प्रणाली के लिए सहायक सामग्री प्रकाशित करती थी, सभी स्कूलों के लिए समरूप आवश्यकताओं का निर्धारण करती थी और अध्यापकों के प्रशिक्षण तथा विभिन्न स्कूलों में उनकी नियुक्ति पर निगरानी रखती थी। केन्द्रीय नियन्त्रण की बदौलत राष्ट्रव्यापी आधार पर पाठ्य-पुस्तकों की योजना बनाना सम्भव हुआ और समरूपता उत्पन्न करने के अतिरिक्त इससे करोड़ों निरक्षर लोगों की आवश्यकता को पूरा करने के लिए बहुत बड़ी संख्या में एक साथ पुस्तकें छापना संभव हो सका। यदि प्रशासन केन्द्रीय न होता तो शायद निरक्षरता-विरोधी अभियान के लिए पर्याप्त मात्रा में साहित्य प्रकाशित करना भी सम्भव न हो पाता।

शिक्षा को केन्द्रीय नियंत्रण में रखने के कारण ही निरक्षरता-विरोधी अभियान को विशिष्ट प्रकार का केन्द्रीय मार्गदर्शन प्रदान करना सम्भव हो सका। शिक्षा पर केन्द्रीय नियन्त्रण से इस बात में भी सहायता मिली कि वह नयी व्यवस्था को ज्यादा अच्छी तरह प्रतिबिम्बित करती रही, और उसमें निरक्षर प्रौढ़ों को पढ़ाने में नये-नये प्रगतिशील प्रयोगों को अपनाने की क्षमता बनी रही। इसकी बदौलत अभियान में अध्यापन की

नयी तथा वेहतर पद्धतियों को प्रचलित करना और विचारों के पार-स्परिक आदान-प्रदान से अध्यापन की समस्याओं को हल करना सम्भव हुआ। केवल केन्द्रीय नियन्त्रण के कारण ही उच्च स्तर का शिक्षा-संबंधी शोध-कार्य और शिक्षा-पद्धति मे इस शोध-कार्य मे परिणामों का उपयोग सम्भव हो सका। शिक्षा पर केन्द्रीय नियन्त्रण साक्षरता को बढ़ावा देने का एक अत्यन्त सफल तरीका सिद्ध हुआ।

'विकेन्द्रित गतिविधियों' की नीति ने वास्तविक नियन्त्रण का भार 'स्थानीय पहल कदमी' को सौंप दिया था। इससे शिक्षा के राष्ट्रीय तथा स्थानीय दोनों ही स्वरूपों के सुरक्षित रहने का आश्वासन हो गया और स्थानीय लोगों को उस अभियान को आगे बढ़ाने का प्रोत्साहन मिला, जिसके संगठनकर्त्ता वे स्वयं थे। 'विकेन्द्रित गतिविधि' के सिद्धान्त का प्रभाव यह हुआ कि स्कूल और जनता के बीच एक कड़ी स्थापित हो गयी, जिसके फलस्वरूप निरक्षरता-विरोधी स्कूलों को बनाने तथा चलाने में सार्वजनिक रुचि तथा सहयोग मे वृद्धि हुई।

सामान्य रूप से, प्रारम्भिक तथा निरक्षरता-विरोधी शिक्षा लेनिन 'केन्द्रित निरीक्षण तथा विकेन्द्रित गतिविधयों' के सिद्धान्तों की पावन्द थी। इससे शैक्षिक कार्यक्रमों तथा निरक्षरता-उन्मूलन अभियान मे सामान्य रूप से समरूपता पैदा हो गयी। केन्द्रिय अधिकारियों ने 'काफी अधिक समरूपकता' के साथ जो कड़ा नियन्त्रण रखा उससे इस अभियान का स्वरूप सचमुच राष्ट्रव्यापी हो गया। इससे समस्त जनता के लिए एकाकार स्कूल-प्रणाली की स्थापना करना सम्भव हो गया और इस प्रकार उसने न केवल ज्ञान के वितरण को लोकतान्त्रिक बनाया बल्कि उसक प्रसार की गति भी तेज कर दी।

# अध्याय ८

## जीवन से जुड़ी हुई शिक्षा

"केवल साक्षरता के हेतु साक्षरता !" भले ही यह अच्छा आदर्श हो पर आम-तौर पर इस आदर्श में अधिक सम्भावनाएँ निहित नहीं हैं। कम-से-कम यह आदर्श इतना नीरस है कि वह किसी भी निरक्षर व्यक्ति को स्कूल की ओर आकर्षित नही कर सकता। यह इतना निष्प्राण है कि उसे पुस्तक छूने के लिए प्रेरित नही कर सकता। यह इतना शक्तिहीन है कि वह स्त्रियो को पर्याप्त प्रेरणा नही दे सकता कि वे लिखना-पढना और हिसाब लगाना सीखने के लिए सामाजिक बाधाओं तथा कुरीतियों के विरुद्ध लड़ें। लेनिन इस बात को भली-भाँति जानते थे और उन्होने शिक्षा को जीवन से असम्बन्धित रखने का विरोध किया। एन० क्रुप्सकाया ने जो इस अभियान की प्रेरक शक्ति थी, इस बात पर आग्रह किया कि निरक्षर लोगों को यह समझाया जाना चाहिए कि शिक्षा का व्यावहारिक मूल्य है और वह किसानो तथा कारखानों के मजदूरों के लिए भी उपयोगी है। उन्होंने कहा : "हर समय यह अनुनय-विनय करने से कोई लाभ नही कि 'अहा, आप लोगों को पढना-लिखना चाहिए, सचमुच यह कितना रोचक होता है ! शायद इस तरह किसी को भी राजी नही किया जा सकता। उन्हें इस बात के ठोस उदाहरण दीजिये कि किस प्रकार साक्षरता से लोगों को वैज्ञानिक ढंग से खेती करने मे निपुणता प्राप्त करने या कारखाने मे कोई नया कौशल सीखने मे सहायता मिल सकती है और यह कि साक्षरता किस प्रकार काम को अधिक उत्पादनशील बना सकती है।

उद्देश्यहीन साक्षरता उस फीकी दवा की तरह है जिसे ग्रहण करना कोई नही पसन्द करेगा। इसीलिए लेनिन ने लोगों से निरक्षरता का

उन्मूलन केवल किताबी ज्ञान या साक्षरता प्राप्त करने के उद्देश्य से नहीं किया, बल्कि उन्होंने इस बात पर आग्रह किया कि साक्षरता का सम्बन्ध जनता के जीवन तथा काम के साथ जोड़ा जाना चाहिए, उसे उद्देश्य-पूर्ण तथा उपयोगी बनाया जाना चाहिए। लेनिन ने कहा, "यदि अध्यापन, प्रशिक्षण तथा शिक्षा को जीवन की हलचल से अलग केवल स्कूल की कक्षाओं तक सीमित रहना हो तो उसके प्रति हमारी कोई आस्था नहीं हो सकती" (यू० एस० एस० आर० यस्टर्डे, टुडे एण्ड टुमारो : पब्लिक एजुकेशन में उद्धृत, पृष्ठ १५)।

समाजवाद का निर्माण सांस्कृतिक क्रांति का मुख्य उद्देश्य था। शिक्षा को सांस्कृतिक क्रांति की बुनियाद होना था और साक्षरता को उस ईंट-गारे का काम करना था जिसके सहारे शिक्षा के इस ढांचे का निर्माण होना था। सोवियत संघ में जनव्यापी साक्षरता का उद्देश्य लोगों को केवल पढ़ना-लिखना सिखा देना नहीं था, बल्कि इसका उद्देश्य उनमें इस बात की क्षमता पैदा करना भी था कि वे समाजवाद का निर्माण कर सकें और इस प्रकार अधिक राजनीतिक शक्ति का उपभोग कर सकें, अधिक उत्पादन-क्षमता प्राप्त कर सकें, अपना सामाजिक पद ऊँचा उठा सकें और उस नये सांस्कृतिक जीवन में भाग ले सकें जिसका आश्वासन समाजवाद देता है। साक्षरता के अभियान के पीछे एक ठोस उद्देश्य का सहारा था। निरक्षर जन-साधारण को समाजवादी निर्माण में भाग लेना सीखना था और उन्हें केवल लिखना-पढ़ना सीख लेने की खातिर लिखना-पढ़ना नहीं सीखना था। लिखना-पढ़ना सीखना तो केवल और अधिक ज्ञानोपार्जन की शुरूआत थी। लेकिन लिखना-पढ़ना और साधारण हिसाब लगा लेना सीखने का भी कुछ लाभ होना चाहिए, इससे लोगों में अधिक दक्षता उत्पन्न होनी चाहिए और उनमें इस बात की क्षमता पैदा होनी चाहिए कि वे प्रत्येक व्यक्ति के दैनिक जीवन में उत्पन्न होने वाली समस्याओं को अधिक बेहतर ढंग से हल कर सकें।

साक्षरता का अर्थ बुनियादी तौर पर पढ़ने-लिखने और मोटा-मोटा हिसाब लगा लेने की क्षमता है। निरक्षरता-विरोधी पाठ्यक्रम में वर्ण-

माला का ज्ञान, सरल वाक्य पढना तथा लिखना और गणित के चार तरह के बुनियादी हिसाब लगा लेना, अर्थात् जोड, घटाव, गुणा और भाग, सिखाया जाना चाहिये। लेकिन पढना-लिखना हवा मे तो नही हो सकता, आदमी कुछ-न-कुछ तो पढेगा ही। शिक्षा का पहला कदम होने के नाते साक्षरता पर विचार हमेशा उस ज्ञान के प्रसंग मे किया जाना चाहिए जो छात्र को अध्ययन के दौरान अर्जित करना है। उसे उद्देश्यपूर्ण तथा अर्थपूर्ण होना चाहिए। "पढने और लिखने की क्षमता का उपयोग सांस्कृतिक स्तर ऊँचा उठाने के लिए किया जाना चाहिए; किसानो को पढना-लिखना इसलिए आना चाहिए कि वे अपनी खेती मे और अपनी दशा मे सुधार कर सकें" (लेनिन, संग्रहीत रचनाएँ खण्ड ३३, पृष्ठ ७५-७६) और कारखानो के मजदूरो को इसलिए कि वे अपनी मशीनो तथा अपने उद्योग मे सुधार कर सकें।

लेनिन ने "शिक्षा" को किसी नुमाइशी चीज की तरह कांच की अलमारी मे रख देना कभी स्वीकार नही किया। शिक्षा को मानव व्यक्तित्व का अभिन्न अंग, समाजवाद के निर्माण मे लगे हुए कार्यकर्ता के लिए आवश्यक गुण माना गया। इसलिए शिक्षा का सम्बन्ध जीवन के साथ, मजदूर के घर, उसके कारखाने, उसके खेत के साथ जोड दिया गया। साक्षरता का और फलस्वरूप शिक्षा का उद्देश्य था हर व्यक्ति में नयी सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था बनाने के उस काम मे भाग लेने की क्षमता पैदा करना जो क्रांति ने सामने रखा था। जानकारी या ज्ञान को अब केवल एक ऐश्वर्य की वस्तु या जीवन का अधिक सुखकर ढंग से व्यतीत करने का साधन मात्र नही बल्कि मुख्यतः समाज वाद का निर्माण करने का एक साधन समझा जाने लगा था।

लेनिन को इस बात का आभास था कि प्रौढ़ साक्षरता का अस्तित्व सामाजिक तथा सांस्कृतिक और इसके साथ ही आर्थिक प्रसंग मे ही सम्भव है, और इस प्रसंग की उपेक्षा करके निरक्षरता पर जो भी प्रहार किया जायेगा वह अनिवार्य रूप से विफल रहेगा। इसीलिए उन्होंने प्रौढ साक्षरता के कार्यक्रमो का सम्बन्ध काम और जीवन के

साथ जोड़ देने पर आग्रह किया। साक्षरता का कोई भी कार्यक्रम आदतों, परम्पराओं, पारिवारिक जीवन आदि को प्रभावित करने में, अर्थात् एक नयी संस्कृति की स्थापना करने मे तभी सफल हो सकता था जब उसकी कोई निश्चित दिशा हो और वह प्रौढ शिक्षा के किसी ऐसे व्यापक कार्यक्रम के साथ अभिन्न रूप से जुडी हो, जिसमे शिक्षा का सम्बन्ध जीवन के साथ जोडकर प्रौढ व्यक्ति को स्वयं उसकी शिक्षा का विषय बनाया जाए। रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) ने मार्च १९१९ में अपनी ८वीं कांग्रेस मे जो कार्यक्रम स्वीकार किया था उसमे अन्य बातो के अतिरिक्त शिक्षा और सामाजिक दृष्टि से उपयोगी तथा उत्पादनशील काम के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करने की बात भी कही गयी थी। निरक्षरता-विरोधी शिक्षकों ने राष्ट्रव्यापी पैमाने पर शिक्षा तथा उत्पादन के बीच उस सम्बन्ध को हमेशा ध्यान मे रखा। अर्थतन्त्र और शिक्षा-व्यवस्था एक-दूसरे के साथ घनिष्ठ सहयोग रखकर काम करते थे, एक-दूसरे को प्रभावित करते थे, एक-दूसरे को बढावा देते थे और तीव्र गति से प्रगति करने मे एक-दूसरे को सहायता देते थे।

साक्षरता के पाठो की योजना इस प्रकार बनायी गयी कि छात्रों को यह बताकर कि देश मे उनके चारो ओर क्या हो रहा है और उन्हे उनके काम तथा रोजगार के बारे मे व्यावहारिक जानकारी देकर ज्ञान को जीवन के साथ जोड दिया जाये। स्कूल ने ऐसी चीजें पढ़ाने की कोशिश की गयी जो समाज की व्यावहारिक मांगें पूरी कर सकें। व्यवहारोपयोगी साक्षरता पाठ्यक्रम मे प्रत्येक स्थिति की विशिष्टता को ध्यान मे रखा गया और प्रौढ लोगो के लिए उनकी आवश्यकताओ के अनुकूल प्रशिक्षण पाठ्यक्रम तैयार किये गये।

व्यवहारोपयोगी साक्षरता पाठ्यक्रम तैयार करना आसान काम नही था और यह काम शिक्षण-शास्त्र के विशेषज्ञ ही कर सकते थे। प्रमुख शिक्षाविदो ने ऐसी पाठ्य-पुस्तकें लिखी जिनमें छात्रों को विज्ञान, संस्कृति तथा कला की आधुनिकतम उपलब्धियो की जानकारी देने की कोशिश की गयी थी। जो भी चीज दकियानूसी, महत्वहीन या व्यावहारिक

जीवन से असम्बन्धित थी उसे निकाल फेंका गया और विज्ञान तथा टेक्नोलोजी की बुनियादी वातों के सुव्यवस्थित तथा सुसगत अध्ययन को उनमे शामिल किया गया। छात्रों को समाजवादी निर्माण के कार्य से परिचित कराया गया। पाठ्य-पुस्तको की विषय-वस्तु इस तरह आयोजित की गयी कि पाठ्य-सामग्री छात्रों को उन समस्याओं मे परिचित कराती थी जिनका सामना उन्हे अपने प्रतिदिन के जीवन में करना पड़ता था। इसी प्रकार अध्यापक भी अपना शिक्षण इस प्रकार आयोजित करते थे कि ज्ञान का सम्बन्ध जीवन के साथ जुड़ा रहे। उदाहरण के लिए, भाषा की कक्षा मे लोगों को अपने काम से सम्वन्धित पत्र लिखना सिखाया जाता था। गणित की कक्षा में वे जीवन से सम्वन्धित समस्याओं को हल करते थे, जैसे फसल के परिमाण का हिसाव लगाना सीखते थे, या इस वात का किसी खेत पर फसल उगाने के लिए कितने समय काम करने की आवश्यकता होगी। साक्षरता के पाठो को पूर्णतः साक्षरता की विषय-वस्तु के अनुकूल बनाया जाता था, अर्थात् पढना-लिखना सिखाने के लिए जिन शब्दो का प्रयोग किया जाता था और गणित में जो प्रश्न दिये जाते थे वे सभी छात्रों के दैनिक कार्य-क्षेत्र से लिये जाते थे और उनका संबंध मेहनतकश जनता की कार्य-सम्बन्धी समस्याओ के साथ होता था। परम्परागत साक्षरता मे केवल पढ़ना, लिखना और थोड़ा-बहुत हिसाब लगाना सिखाया जाता था। व्यवहारोपयोगी साक्षरता में जानकारी के साथ-साथ साक्षरता-कौशल भी प्रदान किया जाता था।

शिक्षा-प्रशासन की योजना इस प्रकार वनायी गयी थी कि वह सुनियोजित अर्थ-व्यवस्था तथा समाज-व्यवस्था के एक अभिन्न अंग के रूप मे काम करती थी। शिक्षातन्त्र को विकासशील अर्थतन्त्र की बढती हुई तथा वदलती हुई आवश्यकताओं के अनुरूप ढाला गया था। साक्षरता तथा शिक्षा आर्थिक उन्नति तथा सामाजिक एकबद्धता को जोडने वाली कड़ी बन गयी। साक्षरता ने तुरन्त ही प्रत्येक व्यक्ति के दैनिक जीवन में अपनी उपयोगिता सिद्ध कर दी। साक्षरता के मेहनतकश जनता के दैनिक जीवन के साथ जोड दिये जाने के कारण "संस्कृति सैनिकों" का काम

ज्यादा आसान हो गया। निरक्षर मजदूर स्वयं ही व्यावहारिक जीवन में साक्षरता की उपयोगिता देखने लगे। उन्होंने यह भी महसूस किया कि शिक्षा कोई ऐसी चीज नही है जो केवल बड़े-बड़े विद्वानों, वैज्ञानिकों, कलाकारों, डाक्टरों या पादरियो के लिए ही उपयोगी हो, बल्कि वह कारखानों के मजदूरों, किसानों और स्त्रियो के लिए भी उपयोगी है।

निरक्षरता-विरोधी सेना के कार्यकर्त्ताओ ने निरक्षर मजदूरों, किसानों तथा स्त्रियो को बताया कि शिक्षा का किस प्रकार उत्पादनशील श्रम के साथ अनिवार्य सम्बन्ध है और किस प्रकार उससे अज्ञानी लोगो को अपनी उत्पादन-क्षमता बढ़ाने मे सहायता मिलेगी। प्रथम कुछ पाठों से ही यह स्पष्ट होने लगता था कि शिक्षा से उन्हे अपने प्रतिदिन के काम में सहायता मिलेगी। निरक्षर लोगों की इस दृढ आस्था के कारण कि स्वयं उनकी साक्षरता न केवल सभी लोगो की समान भलाई के लिए है बल्कि प्रत्येक शिक्षार्थी की अपनी वैयक्तिक भलाई के लिए भी है, वे निरक्षरता-विरोधी अभियान के प्रति अधिक अनुकूल प्रतिक्रिया तथा उत्साह का परिचय देने लगे। उन्होने महसूस किया कि निरक्षरता उनके लिए खेती के मशीनी यन्त्रो का उपयोग करना और जटिल औद्योगिक मशीनें चलाना सीखने मे एक बाधा है। उन्होने यह भी महसूस किया कि निरक्षरता से स्वय उनकी प्रगति में बाधा पड़ती है, और यह कि उत्पादन के काम मे प्रयोग की जाने वाली प्रक्रियाओं के बारे में और अधिक सैद्धान्तिक जानकारी प्राप्त करके वे उत्पादन और अपनी आय बढा सकते हैं। उन्होंने देखा कि शिक्षा जीवन को अधिक रोचक, अधिक उपयोगी तथा अधिक सुखमय बना सकती है और राष्ट्रीय कला तथा सस्कृति के और विज्ञान तथा टेक्नोलोजी के अमूल्य भंडारो के द्वार उनके लिए उन्मुक्त कर सकती है। इससे जन-साधारण के बीच साक्षरता के प्रसार मे सुविधा मिली।

यद्यपि लेनिन निरक्षरता के उन्मूलन को साँस्कृतिक क्रांति का एक प्रमुख काम मानते थे, लेकिन उन्होंने इसके बाद के शैक्षिक पाठ्यक्रमों पर भी आग्रह किया ताकि मेहनतकश लोग समाजवाद के निर्माण में

प्रभावशाली ढंग से हिस्सा ले सकें। इसके फलस्वरूप एक ऐसी शिक्षा-व्यवस्था की स्थापना हुई जो बच्चों की तथा प्रौढों की शिक्षा का क्रम अनवरत बनाये रखती थी। शिक्षा का क्रम कभी टूटता नहीं था। इससे न केवल शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने मे बल्कि साक्षरता की रक्षा करने में भी सहायता मिली। इससे इस बात का आश्वासन हो गया कि नव-साक्षर जो कुछ सीखें उसे भूल न जायें और अपनी प्रतिभा का उपयोग न होने के कारण फिर निरक्षर न बन जायें। जब तक कोई व्यक्ति इतनी पर्याप्त अवधि तक न पढे कि वह स्थायी रूप से साक्षर बन जाये तब तक इस बात का खतरा रहता है कि कही वह अपना प्रारम्भिक ज्ञान भी भूल जाये। निरन्तर शिक्षा की प्रक्रिया से न केवल यह सुनिश्चित हो गया कि नव-साक्षर लोग फिर से निरक्षर न बन जायें बल्कि उन्हें स्वयं अपने कार्य-क्षेत्रों के बारे मे उच्चतर शैक्षिक ज्ञान प्राप्त करने मे भी सहायता मिली। इस प्रक्रिया ने मजदूरों के बीच से इंजीनियर, वैज्ञानिक तथा कृषिवेत्ता पैदा किये और उनके लिए सभी क्षेत्रों मे उच्चतर तकनीकी जानकारी के द्वार खोल दिये।

साक्षरता तथा साक्षरता के बाद की अवस्था की शिक्षा का सम्बन्ध औद्योगिक तथा कृषि उत्पादन के साथ जोड देने के कारण परोक्ष रूप मे सोवियत सरकार को निरक्षरता-विरोधी अभियान के लिए और विशाल शिक्षा कार्यक्रम के लिए धन व्यय करने मे सुविधा हो गयी। सरकार इस राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम मे पैसा लगा सकती थी क्योंकि इस अभियान के फल का देश के अर्थतन्त्र पर सीधा प्रभाव पड़ता था। श्रमिक पुरुषों तथा स्त्रियों के बीच कार्योन्मुखी साक्षरता के प्रसार से उनकी उत्पादन-क्षमता बढ गयी और फिर इसके फलस्वरूप राष्ट्रीय उत्पादन में भी वृद्धि हुई। राज्यसत्ता को इससे जो अधिक आय हुई वह भी उसने जनता के सांस्कृतिक विकास मे लगा दी। एक पूरी अटूट शृंखला बन गयी। शिक्षा से उत्पादन बढा, और उत्पादन से शिक्षा को बढावा मिला।

साक्षरता को छात्र के जीवन तथा कार्य के साथ जोड देना प्रौढों के शिक्षण-विज्ञान में लेनिन का एक प्रमुख योगदान था। इसमे प्रौढों के

बीच निरक्षरता दूर करने के तरीकों मे एक क्रांतिकारी परिवर्तन आ गया। कार्योन्मुखी प्रौढ साक्षरता प्रायोजनाओं ने उल्लेखनीय सफलताएँ प्राप्त करके उद्देश्यहीन शिक्षा-पद्धतियों की तुलना मे अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर दी। यह सफलता इतनी महान थी कि समय की गति के साथ सारी दुनिया ने इस प्रणाली को अपना लिया। अन्तिम विश्लेपण मे यूनेस्को का विश्व साक्षरता कार्यक्रम लेनिन की इस नयी देन पर ही आधारित कार्यक्रम है। "....'व्यवहारोपयोगी साक्षरता' शिक्षा-प्रणाली को...अब इतना व्यापक समर्थन मिल रहा है कि वह शीघ्र ही अन्य सभी परम्परागत प्रौढ साक्षरता शिक्षा-प्रणालियो का स्थान ले लेगी। व्यवहारोपयोगी साक्षरता शिक्षा-प्रणाली काम की शिक्षा को साक्षरता के साथ जोड़ देने पर, ऐसे शब्दों का प्रयोग करने तथा ऐसे विषयों पर प्रकाश डालने पर आधारित है, जो छात्र के काम का अंग हो" (लुकिंग ऐट यूनेस्को, पेरिस, १९७१, पृष्ठ ६६)। यह प्रणाली सोवियत संघ मे निरक्षरता को दूर करने में बहुत बहुमूल्य सिद्ध हुई।

## अध्याय ६

# धर्म-निरपेक्ष शिक्षा

सोवियत संघ मे साक्षरता के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा यह थी कि जनता के जीवन पर गिरजाघरों तथा मस्जिदों का प्रभुत्व था, विशेष रूप से गरीब लोगो के जीवन पर तो उनका प्रभाव विनाशकारी था। रूसी गिरजे पर जार सम्राटों का पूरा नियन्त्रण था और ये लोगो को पराधीन तथा जाहिल रखने के उनके उद्देश्य को हर तरह से पूरा करते थे। गिरजाघरों के स्कूलों को, जिनकी संख्या थोड़ी ही थी, "सरकार चलाती थी और प्रतिक्रियावादी जार उन्हें अपनी एकतन्त्र शासन, धार्मिक कट्टरपंथी और अन्ध राष्ट्रवाद की नीति को लागू करने के साधनों के रूप मे इस्तेमाल करते थे। ये स्कूल प्रतिक्रियावाद का मुख्य अवलम्ब बन गये और उनके कारण रूसी जनता के सभी वर्गों मे गिरजाघरो के मठाधीशो के विरुद्ध एक प्रबल आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। गिरजाघरों के स्कूल बेहद अलोकप्रिय थे और १९१७ की क्रांति के बाद रातोंरात उनका लगभग नाम-निशान ही मिट गया" (कंपेरेटिव एजुकेशन, निकोलस हैंस, पृष्ठ ६८)।

शिक्षा के क्षेत्र मे जो खालीपन था वह जारशाही के खात्मे के बाद और भी उभरकर सामने आ गया। लेकिन गिरजाघर, जिन्होने निरक्षरता बनाये रखने मे जार सम्राटों की सहायता की थी, अब भी यथास्थिति बनाये रखने के लिए तथा निरक्षरता-उन्मूलन अभियान का विरोध करने के लिए लोगों पर अप्रत्यक्ष रूप से अपना प्रभाव डालते रहे। पुराने पूर्वग्रह अब भी मार्ग में बाधा बने हुए थे। धर्म अब भी लोगो को अपनी ओर खीचने की कोशिश करता था और गिरजाघर अभी तक जनव्यापी साक्षरता के विरुद्ध थे।

संसार की ३० करोड़ मुसलमानों की आबादी में से ३ करोड़ सोवियत संघ मे रहते थे। समाज के सभी समुदायों मे वे सबसे अधिक पिछड़े हुए थे। अपनी धार्मिक आस्थाओं के कारण वे औरतों को दबाकर रखते थे, उन्हें कोई सामाजिक स्वतन्त्रता नही देते थे और उन्हे परदे में रहने पर मजबूर करते थे। स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने की इजाजत नही थी और उन्हें निरक्षर रखा जाता था। पुरुष उन्हे समाज में केवल दासों का स्थान देते थे। शिक्षा के मामले में पुरुषों की स्थिति भी उनसे कोई बहुत अच्छी नही थी। क्रांति से पहले मुस्लिम क्षेत्रो में कुरान पढाने के लिए प्राथमिक शिक्षा देने वाले मकतबो और माध्यमिक शिक्षा के मदरसो की व्यवस्था थी जहाँ छात्रों को अरबी में कुरान कंठस्थ कराया जाता था। इससे लडकों मे कोई ज्ञान उत्पन्न नही होता था। मुस्लिम जन-साधारण सर्वथा निरक्षर थे और धर्म के प्रति अपनी अन्धी आस्था के कारण वे नयी शिक्षा के कट्टर विरोधी थे। उनके अंधविश्वासों तथा पूर्वग्रहों के कारण 'साक्षरता अभियान के सैनिकों' को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। मुल्ला और मोमिन निरक्षरता-उन्मूलन अभियान का खुल्लमखुल्ला विरोध करते थे।

क्रांति से पहले शिक्षा पर धार्मिक संस्थाओं का एकाधिकार नियंत्रण था और यदि शिक्षा को गिरजाघरों से फौरन अलग न कर दिया गया होता तो निरक्षरता-विरोधी अभियान आगे बढ ही नही सकता था। धार्मिक शिक्षा साम्यवादी निर्माण की इसलिए विरोधी थी कि साम्यवाद उन्मुक्त अन्तःकरण के सिद्धान्त पर आधारित था और वह मानव मस्तिष्क पर धार्मिक रूढियों के नियन्त्रण का विरोधी था। लेनिन स्कूलों को धर्म-निरपेक्ष बना देने को सांस्कृतिक आन्दोलन में प्रमुख महत्व का कदम मानते थे। धार्मिक शिक्षा हमेशा ही सांस्कृतिक परिवर्तन के मार्ग मे एक बाधा रही थी। इसीलिए सोवियत जन-कमिसारो के प्रथम अध्यादेशों द्वारा स्कूलों को गिरजाघरो से और बाद मे चलकर मस्जिदों से भी अलग कर दिया गया। स्कूल धर्म के घातक प्रभाव से मुक्त होकर धर्म-निरपेक्ष संस्थाएँ बन गये। स्कूलों पर से पादरियों का प्रशासन हटा दिया गया,

और गिरजाघरों के स्कूल, धार्मिक स्कूल, गिरजाघरों के तत्त्वावधान मे चलने वाले महिलाओ के स्कूल, मिशनरी स्कूल और अकादमियाँ सभी शिक्षा जन-कमिसारियट मे विलीन कर दी गयी। सभी संप्रदायो के धार्मिक शिक्षकों की सेवाएं समाप्त कर दी गयीं और स्कूलो की सीमा के भीतर धार्मिक विषयो की शिक्षा देने और धार्मिक उत्सव मनाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया।

वे सभी शिक्षा-प्रतिष्ठान जो अब तक गिरजाघरों के आधीन थे ११ दिसम्बर १९१७ के अध्यादेश से राज्यसत्ता के हवाले कर दिये गये। **गिरजाघरों को राज्यसत्ता से और स्कूलों को गिरजाघरो से अलग करने के विषय में** २१ जनवरी १९१८ को जो अध्यादेश जारी किया गया उसका सोवियत शिक्षा-व्यवस्था की दिशा को बदलने मे निर्णायक प्रभाव पड़ा। धार्मिक रूढियों और मकतब की शिक्षा की ओर कोई ध्यान न देते हुए निरक्षरता-विरोधी अभियान धर्म-निरपेक्षता के आधार पर चलता रहा। निरक्षरता-विरोधी शिक्षक सभी छात्रों के साथ एक जैसा व्यवहार करते थे और सभी विद्यार्थियों के लिए एक ही जैसी पाठ्य-पुस्तकों का प्रयोग करते थे। शिक्षा का धर्म-निरपेक्षीकरण सिद्धान्त तथा व्यवहार दोनों ही की दृष्टि से एक वास्तविकता बन चुका था और उसने शिक्षा कार्यक्रम मे एक विज्ञानसम्मत विश्व दृष्टिकोण का समावेश कर दिया था।

शिक्षा को धर्म-निरपेक्ष बनाना आवश्यक हो गया था ताकि वह मेहनतकश जनता के लिए व्यावहारिक दृष्टि से उपयोगी बन सके और जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण और समाज की रचना को बदल सके। पाठ्यक्रम और पाठ्य-पुस्तकें तैयार करने के लिए सोवियत विशेषज्ञों तथा लेखकों ने जो तरीका अपनाया वह लेनिन के शिक्षा का सम्बन्ध छात्र के जीवन तथा उसके व्यवसाय के साथ जोड देने और उन्हे उन अन्ध-विश्वासों तथा धार्मिक रूढियों के साथ न बँधा रहने देने के सिद्धान्त पर आधारित था, जिन्होंने इतने लम्बे अरसे तक जनता को जीवन की वास्तविक समस्याओ से दूर रखा था।

धार्मिक भावनाओं तथा धार्मिक प्रवृत्तियो से भरी हुई पुरानी पाठ्य-

पुस्तकें तथा अन्य साहित्य नये उद्देश्यों को पूरा नहीं कर सकता था। नयी समाजवादी संस्कृति की रचना करने के लिए जनता के धर्म-निरपेक्ष विचारों के अनुरूप नयी पुस्तकों तथा नये साहित्य की आवश्यकता थी। नयी पुस्तकों मे पुरानी पुस्तको की कृत्रिमता को दूर करके ऐसी सामग्री का समावेश किया जाना था जिसका सम्बन्ध लोगो के जीवन और कार्य से हो। सोवियत जनता ने ऐसी पुस्तकें तैयार की जो जनता की आवश्यकताओ को पूरा कर सकें। इन नयी पुस्तकों ने जनता को धर्म के निराशाजक प्रभाव से मुक्त कर दिया और उन्हें यह अनुभव करने का अवसर दिया कि राज्य मे बसने वाले सभी लोग एक ही वर्ग के है। नये साहित्य ने धर्म के बन्धनों को भग कर दिया और शिक्षा का सम्बन्ध व्यावहारिक जीवन के साथ जोड़ दिया।

शिक्षा को धर्म-निरपेक्ष बनाकर ही उसे लोकतान्त्रिक बनाना व्यवहारतः संभव हो सका। धार्मिक स्कूल के स्थान पर ऐसे एकाकार स्कूलो की स्थापना की गयी जिनमे धर्म के आधार पर किसी भेदभाव के बिना सभी लोग दूसरे धर्मों के लोगो के साथ और उन लोगों के साथ शिक्षा प्राप्त कर सकते थे, जिन्होंने अपने अन्तःकरण को धर्म के चंगुल से मुक्त कर लिया था। निरक्षरता के विरुद्ध लडने के लिए हर जगह इसी प्रकार के स्कूल खोले गये और बिना किसी प्रतिबन्ध या भेदभाव के सभी लोग उनमे लाये गये। इससे न केवल साक्षरता को बढावा देने मे सुविधा हुई बल्कि लोगों मे बराबरी की भावना भी उत्पन्न हुई और वर्गहीन समाज के निर्माण मे सहायता मिली।

शिक्षा को धर्म-निरपेक्ष बना देने से राष्ट्रव्यापी निरक्षरता-विरोधी अभियान को चलाना अधिक सुगम हो गया। सभी विद्यार्थियो के लिए एक ही प्रकार की पाठ्य-पुस्तकें इस्तेमाल की जा सकती थी। विभिन्न धर्मो के अनुसार अलग-अलग पुस्तकें तैयार करना और उन्हें थोडी-थोडी संख्या में छापना कही अधिक आसान था। शिक्षा को धर्म-निरपेक्ष बना देने से सभी के लिए एक जैसा पाठ्यक्रम तैयार करना और निरक्षरता विरोधी अध्यापकों तथा कार्यकर्त्ताओ को प्राथमिक शिक्षा देने मे

सहायता मिली। अध्यापन का एक ही जैसा प्रशिक्षण प्राप्त किये हुए "सस्कृति सैनिकों" के लिए सोवियत संघ की समस्त जनता के बीच निरक्षरता-विरोधी अभियान मे भाग लेना सभव हो गया। यदि शिक्षा को धर्म से अलग न किया गया होता तो निरक्षरता-विरोधी अभियान कभी भी राष्ट्रव्यापी अभियान नहीं बन सकता था।

यदि शिक्षा को धर्म-निरपेक्ष न बनाया गया होता और निरक्षरता-विरोधी अभियान को अ-धार्मिक लोकतान्त्रिक स्वरूप न प्रदान किया गया होता तो इस पर केन्द्रीय निरीक्षण तथा नियन्त्रण भी उसे सफल नही बना सकता था।

धार्मिक शिक्षा ने, विशेष रूप से मध्य एशियाई प्रदेशों मे, स्त्रियों को तीसरे दर्जे के नागरिकों की हैसियत मे रखा था। उन्हे पुरुषों के बराबर पद नही दिया जाता था और उन्हे शिक्षा तो क्या साक्षरता तक प्राप्त करने की अनुमति नहीं थी। उनके अज्ञान ने समाज पुरुष-वर्ग को उन्हें पराधीन रखने मे सहायता दी थी। शिक्षा को धर्म के शिकन्जे से बाहर निकाल लेने का परिणाम यह हुआ कि स्त्रियाँ अज्ञान के अन्धकार से मुक्त हो गयी और साक्षर बन गयी। अगर शिक्षा को धर्म-निरपेक्ष न बनाया गया होता और पुरुषों को नयी संस्कृति न सिखायी गयी होती तो निरक्षरता-विरोधी अभियान स्त्रियों के बीच निरक्षरता को समाप्त करने मे कभी सफल नहीं हो पाता।

शिक्षा को धर्म-निरपेक्ष बनाये बिना साक्षरता की इतनी तीव्र गति से प्रगति कभी सभव न होती और उच्च शिक्षा कभी भी जन-साधारण तक न पहुँचती। "धार्मिक साक्षरता" प्राप्त किये हुए लोगों के लिए विज्ञान तथा टेक्नोलोजी की उच्च स्तर की शिक्षा का आवश्यक आधार कभी उपलब्ध न हो पाता। वे जिन खेतों मे फसलें उगा रहे थे और जिन मशीनी औजारों से काम कर रहे थे उनसे पूरी तरह परिचित हुए बिना किशोर तथा प्रौढ श्रमिक उच्च स्तर की तकनीकी, वैज्ञानिक तथा कृषि-विज्ञान की शिक्षा पाने मे कभी सफल नहीं हो सकते थे। उद्देश्य-पूर्ण "धर्म-निरपेक्ष साक्षरता" की बदौलत ही सोवियत श्रमिक आश्चर्य-जनक हद तक अल्प अवधि में कुशल तकनीशियन बन गये।

## अध्याय १०

## भाषाओं का विकास

निरक्षरता का उन्मूलन करने के अपने अभियान में सोवियत सघ को अपनी जनसंख्या के बहुभाषी स्वरूप के कारण गम्भीर समस्याओं का सामना करना पड़ा। इस राज्य मे बहुत से भाषाई समूह हैं। इस बहु-भाषी सघ में १३० से अधिक भाषाएँ तथा बोलियाँ है। १९१७ से पहले रूसी साम्राज्य में विभिन्न भाषाएँ बोलने वाली अनेक जातीय इकाइयाँ थी। जारशाही रूस में केन्द्रीय तथा स्थानीय अधिकारी सार्वजनिक शिक्षा की जो व्यवस्था चलाती थी उसका सारा काम रूसी भाषा में होता था। केवल प्राइवेट स्कूलो को ही जातीय मातृभाषा का प्रयोग करने की छूट थी। फिनलैंड को छोडकर हर जगह रूसी ही एकमात्र सरकारी भाषा थी। १९०५ की क्रांति के बाद भी जातीय भाषाओं मे शिक्षा देने वाले स्कूलों की माग नही मानी गयी थी। १९१४ मे लेनिन ने स्कूलो मे एक ही "सरकारी भाषा" मे शिक्षा दिये जाने का विरोध किया था उन्होंने माँग की: "कोई अनिवार्य सरकारी भाषा न रखी जाये; स्कूलों में सभी स्थानीय भाषाओं मे शिक्षा देने का आश्वासन हो।" यद्यपि लेनिन को "तुर्गनेव, ताल्सताय, दोब्रूलूबोव और चेर्नीशेव्स्की की भाषा" की सशक्तता मे पूरा विश्वास था, परन्तु वह उसे उन लोगों पर थोपने के विरोधी थे जिनकी स्वयं अपनी भाषाएँ थी। इसीलिए वह शिक्षार्थी की मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देने के पक्ष में थे। लेनिन शिक्षा के क्षेत्र मे हर नागरिक को बराबर मानने मे विश्वास रखते थे। क्रान्ति से पहले इसके बारे मे उन्होने अपनी जो नीति बतायी थी उसमें उन्होने कहा था: "लोकतान्त्रिक राज्य सत्ता मे प्रत्येक जाति का इतिहास और इसी प्रकार के अन्य विषय की माँग किये जाने पर उस जाति की मातृ भाषा मे ही पढ़ाये

जाने चाहिए। लोकतान्त्रिक राज्य सत्ता को बिना किसी शर्त के स्कूलों में 'सरकारी भाषा' लागू किये जाने का विरोध करना चाहिए" (सोवियत एजुकेशन, मारिस शोर, पृष्ठ १२१)।

सोवियत सरकार ने संघ में सम्मिलित सभी राज्यों की बराबरी को मान्यता दी है और उनकी भाषाओं का सम्मान किया है। ३ नवम्बर, १९१७ को जातियों के अधिकारों की घोषणा की गयी और सभी नस्लों, धर्मों और भाषाओं की बराबरी को मान्यता दी गयी। सोवियतों की तीसरी कांग्रेस ने जनवरी १९१८ में घोषणा की : "रूसी सोवियत जनतन्त्र की स्थापना स्वतन्त्र राष्ट्रों के स्वतन्त्र संघ के आधार पर सोवियत जातीय जनतन्त्रों के एक संघ के रूप में की जाती है।" सोवियत संघ में अब १५ सोवियत समाजवादी जनतन्त्र हैं, अर्थात् (१) रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतन्त्र, (२) उक्राइन, (३) कजाखस्तान, (४) उजबेकिस्तान, (५) ब्येलो-रूस, (६) जिर्याजिया, (७) आजरबैजान, (८) मोल्दाविया, (९) लिथुआलिया, (१०) लातविया, (११) किरगीज़िया, (१२) ताज़िकिस्तान, (१३) आर्मीनिया, (१४) तुर्कमेनिस्तान और (१५) एस्तोनिया।

यदि कुछ जनतन्त्रों में लोग साक्षर होते और कुछ में निरक्षर होते तो सभी जनतन्त्र संघ में बराबर के साझेदार नहीं हो सकते थे। संघ में सम्मिलित सभी जनतन्त्रों में सार्विक साक्षरता की व्यवस्था न की जाती तो यह समानता के सिद्धान्त का उल्लंघन होता। स्वाभाविक रूप से सोवियत सरकार को जनतन्त्रों तथा जातियों की बराबरी बनाये रखने के लिए इस बात की व्यवस्था करनी थी, पिछड़े हुए वर्ग पिछड़े हुए न रह जायें और निरक्षरता-विरोधी अभियान घर-घर पहुँच जाये। इसलिए, आरम्भ से ही सोवियत सरकार ने अल्प सख्यक जातियों के सांस्कृतिक विकास और जनता की शिक्षा में जातीय भाषाओं की भूमिका की ओर बहुत अधिक ध्यान दिया। सभी जनतन्त्रों में संघ की भाषा के रूप में रूसी के अतिरिक्त वहाँ की जनता की जातीय भाषा को शिक्षा का सरकारी माध्यम स्वीकार किया गया।

अनुभव ने इस बात की पुष्टि करदी कि उन निरक्षरों को, जिनकी भाषा रूसी नहीं थी, रूसी के माध्यम से साक्षर बनाना कठिन था। लोगों को साक्षरता की शिक्षा उनकी अपनी मातृभाषा में देने का निर्णय लेने का यह भी एक कारण था। इस निर्णय को क्रियान्वित करने के लिए अक्तूबर १९१८ में निम्नलिखित अध्यादेश जारी किया गया :

१. रूसी समाजवादी संघात्मक सोवियत जनतन्त्र मे बसने वाली सभी जातियों को श्रमिकों के एकाकार स्कूलों और उच्चतर शिक्षा के स्कूलों दोनो ही में अपनी मातृभाषा में शिक्षा की व्यवस्था करने का अधिकार है।

२. अल्पसंख्यक जातियों के स्कूल हर उस जगह पर खोले जायेंगे जहाँ किसी जाति विशेष के छात्र इतनी पर्याप्त संख्या मे मौजूद हो कि वहाँ स्कूल खोलना उचित समझा जाये।

३. विभिन्न जातियों के श्रमिकों के बीच सांस्कृतिक एकता पैदा करने और वर्ग एकजुटता विकसित करने के लिए अल्पसंख्यक जातियों के स्कूलों मे उस जिले की बहुमत जनसंख्या की भाषा का पढ़ाया जाना अनिवार्य होगा।

इस अध्यादेश के पालन के फलस्वरूप गैर-रूसी क्षेत्रों मे बहुत बड़ी संख्या में स्कूल खोले गये और साक्षरता की शिक्षा मातृभाषाओं मे दी जाने लगी। निरक्षरता के उन्मूलन के बारे मे लेनिन के अध्यादेश मे भी हर व्यक्ति को उसकी अपनी मातृभाषा मे साक्षरता की शिक्षा देने की कल्पना की गयी थी और उस भाषा मे प्राप्त की गयी साक्षरता अध्यादेश का समुचित पालन मानी जाती थी। इस प्रकार गैर-रूसी जातियों को शिक्षा देने की समस्या कुछ हद तक हल कर ली गयी।

परन्तु समस्या का महत्त्व इससे अधिक व्यापक और अधिक जटिल था। कई छोटी-छोटी जन-जातियों तथा जातीय समूहों के पास न अपनी कोई वर्णमाला थी, न कोई साहित्यिक भाषा थी और न कोई बुद्धिजीवी वर्ग था। जिन लोगों की भाषा रूसी थी उन्हें छोड़कर अन्य सभी लोगों को चार कोटियों में विभाजित किया जा सकता हैं : (१) छोटी-छोटी और बिखरी हुई जन-जातियां जिनकी अपनी कोई वर्णमाला नही थी,

(२) छोटी-छोटी और बिखरी हुई जन-जातियाँ जिनकी अपनी कोई वर्णमाला तो नही थी, परन्तु जो सुगठित समुदायों के रूप मे साथ रहते थे और अपने प्रतिदिन के जीवन मे अपनी मातृभाषा का प्रयोग करते थे; (३) बड़ी जातियाँ और गैर-रूसी जातियों के लोगों के समुदाय जिनकी स्वयं अपनी वर्णमाला और अपना बुद्धिजीवी वर्ग था; और (४) बडी जातियाँ जो सुगठित क्षेत्रों मे रहती थी, जिनकी अपनी वर्णमाला, अपनी भाषा और अपनी शिक्षा-व्यवस्था थी। हर कोटि के साथ अलग-अलग ढंग का व्यवहार करने की आवश्यकता थी। इसलिए हर कोटि के लोगों के सम्बन्ध में अलग-अलग तरीके अपनाये गये। प्रथम कोटि के लोगो को रूसी वर्णमाला सिखाई गयी और उन्हे रूसी के माध्यम से साक्षर बनाया गया। दूसरी कोटि के लोगो को प्राथमिक शिक्षा के स्तर तक रूसी वर्णमाला का प्रयोग करते हुए उनकी मातृभाषा मे शिक्षा दी गयी। तीसरी और चौथी कोटियों के लोगो को उनके प्रथम पाठ स्वयं उनकी मातृभाषा मे पढाये गये। रूसी सभी कोटियों के लोगों को पढाई गयी, परन्तु उसे निरक्षरता के उन्मूलन के लिए इस्तेमाल नही किया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि गैर-रूसी जातियों के लोगों ने, जो जारशाही के शासनकाल मे अधिकांश निरक्षर थे, शीघ्र ही अपनी मातृभाषा के माध्यम से साक्षरता प्राप्त की और रूसी भाषा का भी ज्ञान प्राप्त कर लिया।

क्रान्ति से पहले गैर-रूसी लोगों की जातीय भाषाओं को न सरकारी काम-काज मे कोई स्थान प्राप्त था, न व्यापार मे और न ही सांस्कृतिक जीवन मे। सोवियत सरकार की पहली घोषणाओं में से ही एक में सभी जातियों को सरकारी काम-काज मे और स्कूलों मे पढ़ाने के लिए स्वयं अपनी भाषा का प्रयोग करने का अधिकार दे दिया गया। लेकिन जब तक लिपिबद्ध भाषाएँ न बन जाती और उचित रूप न धारण कर लेती और इन भाषाओ मे पुस्तकें न प्रकाशित हो जाती तब तक मातृभाषा मे शिक्षा देने के अधिकार की घोषणा मात्र मे उन भाषाओ के माध्यम से शिक्षा देना सम्भव न था और न ही व्यवहारिक। शिक्षण-प्रणालियाँ निर्धा-

रित करनी थीं और अध्यापकों को मातृभाषा के माध्यम से प्रथम पाठ सिखाने का प्रशिक्षण दिया जाना था।

मोटे-मोटे तौर पर भाषाओं का इतिहास यह बताता है कि लिपिबद्ध रूप मे भाषाओं का विकास आम तौर पर किसी भी समाज के सामाजिक-आर्थिक विकास की पूंजीवादी अवस्था मे होता है। जब तक किसी समाज के लोग पूंजीवाद की अवस्था मे नहीं पहुँच जाते तब तक वे अपने लिए लिपिबद्ध भाषा विकसित नही कर पाते। कम से कम मध्य एशिया में बसने वाली जातियो के संबंध मे तो, जो अभी तक पूंजीवादी अवस्था से पहले वाली अवस्था में थी, यही बात सार्थक थी। सोवियत संघ के इन मध्य एशियाई जनतन्त्रों की, और कजाखस्तान की भी, क्रांति से पहले तक कोई लिपिबद्ध भाषा नही थी। उनकी कोई वर्णमाला भी नही थी। क्रांति से पहले के दिनों मे इन राज्यों या जातियों के समूहों का स्वरूप स्वयं बहुभाषी था। उनमें बोली जाने वाली भाषाएँ तो बहुत-सी थी लेकिन लिपिबद्ध भाषा कोई भी नही थी। बोली जाने वाली भाषाओं का भी कोई एक जैसा रूप नही था। एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश मे उनका रूप बदल जाता था। वहां बहुत-सी बोलियाँ भी प्रचलित थी। इन इलाकों में अनेक भाषाएँ बोली जाती थी, जिनमें तुर्की तथा ईरानी भाषाओं के अनेक परिवर्तित रूप, दुगन भाषा, मध्य एशिया यहूदियों की भाषा और अरबी बोलियां शामिल थी। लगभग ये सभी केवल बोली जाने वाली भाषाएं थी। अपने लिपिबद्ध रूप में ताजिक तथा उज़बेक भाषाएँ भी मध्ययुगीन बोलियों पर आधारित थी और वे उस समय बोली जाने वाली भाषाओं से बहुत भिन्न थी और आम लोग उन्हे समझ नही पाते थे। इन मध्य प्रदेशों में और कजाखस्तान मे सरकारी अफसर साहित्यिक रूसी का प्रयोग करते थे, मुस्लिम मुल्ला अरबी इस्तेमाल करते थे, व्यापारी फारसी से अपना काम चलाते थे और आम आदमी न पढना जानता था न लिखना। वे केवल अपने-अपने देश की बोलियाँ बोलते थे।

प्रचलित जातीय भाषाओं मे आम तौर पर निम्नलिखित लाक्षणिक विशेषताएँ पायी जाती थी:

(क) बोली जाने वाली भाषा मे भी समरूपता का अभाव;

(ख) इन भाषाओ को बोलने वालों के बीच आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक बन्धनो के अभाव के कारण बोली जाने वाली भाषाओं का क्षेत्रीय भाषाओं मे विभाजन;

(ग) वर्णमाला और सामान्य जातीय लिपिवद्ध भाषा का न होना;

(घ) उच्च स्तर के सांस्कृतिक अथवा वैज्ञानिक विचारों को व्यक्त करने के लिए एक समरूप उन्नत भाषा का न होना;

(ङ) कुछ क्षेत्रो में मध्ययुगीन बोलियों पर आधारित पुरानी लिपिवद्ध भाषाओं का अस्तित्व जो उस समय बोली जाने वाली जातीय भाषाओ से बहुत भिन्न थी और इसलिए जनता या तो उन्हे ठीक से नही समझ पाती थी या बिलकुल ही नही समझ पाती थी;

(च) ऐसी प्रक्रियाओं का अस्तित्व जो भिन्न बोलियों को एक-दूसरे के निकटतर लाने या एक समरूप लिपिवद्ध जातीय भाषा के रूप मे सश्लिष्ट करने के बजाय उनके बीच अतर बढाने की प्रवृति रखती थी।

क्रांति के बाद सोवियत संघ में बसने वाले सभी लोगो को एक सामान्य सांस्कृतिक स्तर तक पहुंचा देना बहुत महत्त्वपूर्ण हो गया। सभी लोगों को साक्षर बनाये विना ऐसा कर पाना संभव नही था। सभी लोगों को साक्षर बनाने के बाद उच्चतर शिक्षा के अवसर उन्हे उपलब्ध करके ही जनता का सांस्कृतिक स्तर ऊँचा उठाना सभव था। और जब तक सभी लोगों की लिपिवद्ध भाषा न होती तब तक यह असंभव था। इसलिए उन लोगो के लिए जिनकी कोई वर्णमाला तथा लिपिवद्ध भाषा नहीं थी इनकी व्यवस्था करने का प्रश्न उत्पन्न हुआ। सभी जनतंत्रों मे प्रचलित भाषाओं की विभिन्न बोलियों का अध्ययन करने के लिए भाषाविदों का आयोग नियुक्त किया गया।

इन भाषाविदो को यह काम सौंपा गया कि वे (क) अत्यधिक जटिल मध्ययुगीन ढग की लिपि के स्थान पर एक ऐसी नयी लोकप्रिय ढंग की लिपि तैयार करें जो आधुनिक विज्ञान की आवश्यकताओं के अनुकूल हो, और (ख) जिन लोगों की कोई लिपिबद्ध भाषा नहीं है उनके लिए लिपिबद्ध भाषा विकसित करें।

इन विशेषज्ञो ने विभिन्न प्रदेशों मे प्रयुक्त सभी समकालीन बोलियों का अध्ययन किया और भाषा को लिपिबद्ध करने के कुछ बुनियादी सिद्धात निर्धारित किये। बोलियों को आम तौर पर आधार स्वीकार कर लिया गया। बोलियों को भाषा का आधार मानने का निर्णय करते समय निम्नलिखित प्रमुख परिस्थितिओं को ध्यान मे रखा गया :

(क) जिन लोगो के लिए लिपिबद्ध भाषा बनायी जा रही हो उनके बीच वह बोली सबसे व्यापक रूप से बोली जाती हो;

(ख) उस विशेष बोलो को बोलने वालों की समस्त जनता के आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक जीवन में अपेक्षाकृत दूसरो से ऊँची हो ;

(ग) उस बोली मे ध्वनि-विधान के बुनियानी तत्व, व्याकरण का ढांचा और भाषा का शब्द-भंडार मौजूद हो।

प्रचलित बोलियों और उनके ध्वनि-विधान के वैज्ञानिक अध्ययन के आधार पर इन भाषाविदो ने सभी जातियों के लिए लिपिबद्ध भाषाएँ तैयार की। इसके बाद उन भाषाओ मे पुस्तकें लिखी गयी, पहले लोगों को बनाने के उद्देश्य से और फिर उन्हे उच्चतर शिक्षा देने के लिए।

भाषाविदो को इसके बाद अत्यंत जटिल मध्ययुगीन ढंग की लिपिबद्ध भाषाओं के स्थान ऐसी नयी लोकप्रिय ढंग की लिपिबद्ध भाषाएँ तैयार करनी पड़ी जो आधुनिक विज्ञान की आवश्यकताओं के अनुरूप हों। उनके जिम्मे उन लोगों के लिए भी भाषाएँ विकसित करने का काम था जिनकी भाषाओं मे पर्याप्त अभिव्यक्ति का गुण नही था। हर जाति के लिए एक समान जातीय साहित्यिक भाषा विकसित करनी थी। यह

भाषा उस जनतन्त्र मे इस्तेमाल की जाने वाली भाषाओं की विभिन्न बोलियो मे से *कोई एक हो सकती थी या कई बोलियों का मिश्रण हो* सकती थी। लिपिबद्ध भाषाओं ने अपने विकास के दौरान अलग-अलग मार्ग अपनाये थे। उजबेक साहित्यिक भाषा पुरानी लिपिबद्ध भाषा पर आधारित थी जिसके मानदंड बोली जाने वाली जातीय भाषा से बहुत नीचे और बहुत दूर थे। बाद मे चलकर उसका आधार विस्तृत करके उसमें समध्वनिक देहाती बोलियों और ताशकंद तथा फरग़ाना की शहरी बोलियो को भी शामिल कर लिया गया। इसके विपरीत तुर्कमेनियाई *साहित्यिक भाषा पुरानी साहित्यिक बोली के आधार पर* बनायी गयी। विभिन्न भागों मे बोली जाने वाली बोलियों ने नयी तुर्कमेनियाई साहित्यिक भाषा के लिए एक संयुक्त आधार प्रदान किया, जो आम तौर पर बोली जाने वाली जातीय भाषा के अनुरूप था। ताजिक साहित्यिक भाषा मूलतः क्लासिकी युग की उस भाषा पर आधारित थी जो लगभग ६वीं शताब्दी के मध्य में मध्य एशिया मे बनी थी। वह बोली जाने वाली भाषा से बहुत भिन्न थी और जन-साधारण की पहुँच के बाहर थी। १६२८-३० में भाषा-सम्बन्धी सम्मेलनों में यह निर्णय किया गया कि उत्तर-पश्चिमी ताजिकों की बोली को आधुनिक ताजिक साहित्यिक भाषा के आधार के रूप मे इस्तेमाल करने का निर्णय किया गया। क्रांति के बाद किरगीज साहित्यिक भाषा ने अपना विकास किया। उत्तर की *बोलियो का क्षेत्र फैलता रहा और धीरे-धीरे उन्होंने दूसरी बोलियों को* हटाकर विकास की प्रक्रिया से जातीय साहित्यिक भाषा का रूप धारण कर लिया। जहाँ तक कजाख तथा कारा-कल्पाक भाषाओं का सबन्ध था, उनके बोलियो वाले आधार मे बहुत थोड़ा अंतर था और वे ज्यों की त्यों बनी रही।

भाषा विशेषज्ञों ने मौजूदा लिपिबद्ध भाषाओं में इस ढंग से सुधार किया कि वे बोली जाने वाली भाषा के निकटतर आ जायें और उन्हें जन-साधारण आसानी से समझ सकें; और वे विकासशील कला, विज्ञान तथा टेक्नोलोजी की आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त सिद्ध हों।

लिपिबद्ध भाषाएँ बनाने का उद्देश्य मुख्यतः निरक्षरता का उन्मूलन करना और सोवियत संघ में बसने वाली सभी जातियों के लोगों के राजनीतिक, तकनीकी तथा सांस्कृतिक स्तरों को तेजी से ऊँचा उठाना था। स्थानीय बोलियों तथा भाषाओं के मूल स्वभाव को सुरक्षित रखने की कोशिश अवश्य की गयी पर उन्हे समाज की इस प्राथमिक आवश्यकता पर हावी नहीं होने दिया गया कि एक ऐसी भाषा बनायी जाये जो आसानी से सीखी जा सके और सांस्कृतिक विकास में पूरे राष्ट्र को एक सूत्र में पिरो देने मे समुचित योगदान कर सके।

नयी भाषाएँ और पुरानी भाषाओं को नये साँचे मे ढालने का काम पूरा होने पर भाषा का आन्दोलन समाप्त नहीं हो गया। सोवियत भाषाविदों के सामने एक और काम यह था कि वे एक ऐसी वर्णमाला का विकास करें जो सभी लिपिबद्ध भाषाओं के लिए समान रूप से काम आ सके।

आजरबैजान, तुर्कमेनिस्तान, उजबेकिस्तान, ताजिकिस्तान, किरगीजिस्तान और कजाखस्तान के मुस्लिम जनतन्त्रों में, और तातार स्वायत्त जनतन्त्र में भी, मकतवो तथा मदरसों मेंअरबी लिपि इस्तेमाल की जाती थी। यह लिपि तुर्क-तातारी भाषाओं के लिए अनुपयुक्त पायी गयी और शीघ्र ही यह पता चला कि अरबी लिपि जन-शिक्षा के लिए और जन-साक्षरता के लिए भी एक बाधा है।

अरबी लिपि के माध्यम से साक्षरता का प्रसार करने की कोशिश की गयी पर इसके परिणाम निराशाजनक रहे और प्रगति बहुत धीमी रही। हीब्रू वर्णमाला भी बहुत जटिल और सीखने मे मुश्किल थी। इसलिए यह सलाह दी गयी कि अरबी वर्णमाला की जगह लैटिन वर्णमाला अपनायी जाये। लैटिन वर्णमाला की सहायता से निरक्षरता को अधिक जल्दी दूर किया जा सकता था। प्रयोगों से यह सिद्ध हो गया कि अरबी या हीब्रू वर्णमाला की अपेक्षा लैटिन वर्णमाला कम समय में सीखी जा सकती थी। यह भी देखा गया कि अरबी और हीब्रू के अक्षर इतने काफी विकसित नहीं थे कि आधुनिक आवश्यकताओ को पूरा कर सकें।

सुधारने में सहायता मिली और अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त रूसी भाषा में भी निपुणता करने में सुविधा हो गयी। अधिकांश जनतन्त्रों में समान लिपि के रूप में रूसी के अपना लिए जाने से सोवियत संघ के लिए बहुत विशाल पैमाने पर साहित्य प्रकाशित करना सभव हो गया। सभी भाषाओं के सभी क्लासिकी ग्रंथों की लाखों प्रतियां प्रकाशित की गयीं। पूरे संघ में निरक्षरता को मिटाने के लिए अध्यापन-सामिग्री विपुल मात्रा में उपलब्ध हो गयी। १९२४ में सोवियत संघ में बसने वाली जातियों का केन्द्रीय प्रकाशन गृह पच्चीस भाषाओं में पुस्तकें प्रकाशित करता था। १९३१ तक छिहत्तर भाषाओं में पुस्तकें प्रकाशित की जाने लगीं। अब सोवियत पुस्तकें नवासी सोवियत जातीय भाषाओं में प्रकाशित की जाती है।

स्वयं रूसी भाषा को भी उसी रूप में नहीं रहने दिया गया जिसमें वह पहले थी। क्रान्ति के शीघ्र ही बाद बेहतर तथा अधिक सुविधाजनक वर्तनी अपनाकर इस भाषा को एक सूत्र में पिरोने की कोशिश की गयी। शिक्षा कमिसारियट की ओर से २३ दिसम्बर १९१७ को जारी किये गये एक विशेष अध्यादेश में रूसी वर्तनी की प्रणाली में संशोधन किया गया। इससे रूसी भाषा सीखने की आवश्यक पेचीदगियाँ दूर हो गयीं और उसे सीखना जन-साधारण के लिए अधिक सुगम हो गया। इस अध्यादेश ने त्वरित रूप से ये नये नियम लागू कर दिये . "जनता के लिए पढना तथा लिखना सीखने का काम सुगम बनाने के लिए, सामान्य शिक्षा का स्तर ऊँचा उठाने के लिए और स्कूलों को वर्ण-विन्यास के सिद्धान्त सीखने में समय तथा श्रम के अनावश्यक अपव्यय से छुटकारा दिलाने के लिए यह आदेश जारी किया गया कि सभी सरकारी संस्थाएँ तथा स्कूल यथासंभव अल्पतम अवधि से वर्तनी की नयी प्रणाली को अपना लें।"

नयी वर्तनी अपनाने का परिणाम यह भी हुआ कि पुरानी किताबें बेकार हो गयीं जो यों भी नयी अधिक बडी आवश्कताओं को पूरा करने के लिए पूर्णतः अपर्याप्त थीं। नयी पुस्तकों की आवश्यकता तात्का-

लिक हो गयी। पर्याप्त संख्या में नये विचारों तथा संशोधित वर्तनी के आधार पर नयी पुस्तकें तैयार करना विशाल कार्य था। इसके लिए सभी विषयों के लेखकों और इसके साथ ही कागज तथा छापेखानों की आवश्यकता थी।

शिक्षण विज्ञान के क्षेत्र में बहुत शोध-कार्य करना आवश्यक था ताकि उन प्रौढ़ों को पढ़ाया जा सके जो इससे पहले कभी लिपिबद्ध भाषा से परिचित नही रहे थे। नयी भाषा पढ़ाने के लिए अध्यापक तैयार करने थे। "मास्को में गैर-रूसी जातियों के लोगों को उनकी अपनी तथा रूसी भाषाएँ पढाने की समस्याओं का अध्ययन करने के लिए एक केन्द्रीय शोध संस्थान की स्थापना की गयी। १९३८ और १९३९ के दौरान इस संस्थान ने उनतीस विभिन्न जातियों के लिए पाठ्यक्रम तैयार किये, जिनमे ओसेलियाई, याकूत, बश्कीर, बुर्यात तथा मंगोल जैसी जातियों के लोग भी शामिल थे। इन लोगो को अपनी भाषाओं के साहित्य की पाठ्य-पुस्तकें तथा पाठ्यक्रम तैयार करना कही अधिक कठिन काम था, क्योंकि इसका अधिकाश भाग उन लोगो से सुन-सुनकर लिखना और जमा करना पडता था जिन्होने स्वयं यह सारा साहित्य मौखिक रूप से अपने-अपने माता-पिता से सुनकर याद किया था।" (**सोवियत एजुकेशन टुडे**, डियाना लेविन, पृष्ठ ११९-२०)। परन्तु इससे उन गैर-रूसी जातियों के लोगों के बीच जिनकी अपनी कोई लिपिबद्ध भाषा नही थी, निरक्षरता को दूर करने की रफ्तार बहुत तेज हो गयी। इससे विभिन्न जातियो के बीच शिक्षा की प्रक्रिया मे सामंजस्य पैदा हो गया और अध्यापकों का काम अधिक आसान हो गया।

निरक्षरता-उन्मूलन के लिए और 'समाजवादी मानव' के विकास के लिए यह आवश्यक था कि सभी लोगो की लिपिबद्ध भाषा हो और वह ऐसी भाषा हो जो समाजवादी विचारों को व्यक्त करने और नयी संस्कृति को आत्मसात करने की क्षमता रखती हो।

## अध्याय ११

### सोवियत शिक्षक

निरक्षरता-उन्मूलन के सांस्कृतिक अभियान को अपनी यात्रा एक दुर्गम पथ पर आरम्भ करनी पड़ी और उसका रास्ता काँटों से भरा हुआ था। यद्यपि आरम्भ में उसकी रफ्तार बहुत तेज थी परन्तु वह बहुत दूर तक नहीं जा सका। लेनिन ने इसके तीन कारण बताये: जारशाही ने कई वर्षों के दौरान सार्वजनिक शिक्षा को बिल्कुल तहस-नहस कर दिया था; नये जीवन को आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए और जनता की बढ़ती हुई सृजनात्मक पहलकदमी का पूरा उपयोग करने के लिए पर्याप्त संख्या में बुद्धिजीवी नहीं थे; और सोवियत सत्ता के प्रथम कुछ महीनों में देश की सांस्कृतिक शक्तियों का अधिकांश भाग, उसके क्रांति से पहले के बुद्धिजीवियों ने, जिनमें अध्यापक भी शामिल थे, क्रान्ति का विरोध किया और सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व की जड़ें खोखली करने के उद्देश्य से सक्रिय रूप से सोवियत-विरोधी तोड़-फोड़ में भाग लिया। लेनिन ने कहा, "पुराने रूस के अधिकांश बुद्धिजीवी सोवियत शासन के कट्टर विरोधी थे, और इसमें कोई सन्देह नहीं था कि इससे जो कठिनाइयाँ उत्पन्न हुई थी उन पर काबू पाना आसान नहीं था।" आरम्भ में निरक्षरता-विरोधी अभियान को जारशाही बुद्धिजीवियों की प्रतिक्रान्तिकारी गतिविधियों का भी सामना करना पड़ा।

शिक्षा-विभागों के कर्मचारियों और काफी बडी संख्या में अध्यापकों ने निरक्षरता-विरोधी मुहिम को अपना सहयोग प्रदान करने से इन्कार कर दिया और वे जाकर तोड़-फोड़ करने वालों के साथ मिल गये। शिक्षा-विभागों के कर्मचारियों ने वास्तव में प्रतिक्रान्तिकारी अध्यापकों के साथ गँठजोड़ करके इस योजना को विफल करने की कोशिश की।

नवम्बर १६१७ में कुछ प्रगतिशील अध्यापकों ने अखिल-रूस शिक्षक संघ की प्रतिक्रान्तिकारी हरकतों की काट करने के लिए अन्तर्राष्ट्रवादी शिक्षक संघ की स्थापना की। इस नये संगठन को सरकार तथा जनता का समर्थन प्राप्त हुआ और धीरे-धीरे उसकी शक्ति वढने लगी। अध्यापको ने शीघ्र ही यह महसूस किया कि वे मजदूरों के वर्ग का एक हिस्सा है और यह कि जन-साधारण मे जागृति फैलाने के लिए और समाजवाद की विजय के लिए सर्वहारा वर्ग तथा अध्यापकों का मिलकर संघर्ष करना आवश्यक है।

लेनिन की इस सलाह पर चलते हुए कि "अध्यापकों को शिक्षा के क्षेत्र में अपने जिम्मे वहुत-सा काम लेना चाहिए और सबसे बढ़कर उनकी जिम्मेदारी यह होनी चाहिये कि वे समाजवादी शिक्षा की मुख्य सेना का रूप धारण कर लें", अधिकाँश अध्यापक, विशेष रूप से निचली श्रेणियों के, जनता के बीच निरक्षरता-उन्मूलन का काम करने के लिए आगे आये। धीरे-धीरे दूसरे लोग भी उनके साथ हो गये। लेनिन का समझाने-बुझाने का तरीका निरक्षरों को पढ़ाने के लिए तात्कालिक रूप से अध्यापकों की सेना जुटाने और इसके साथ ही निरक्षरता-विरोधी कार्यकर्त्ताओं, संस्कृति सैनिकों तथा अध्यापकों के एक नये दल को प्रशिक्षित करने मे सफल रहा।

लेनिन ने अध्यापको को उच्च प्रतिष्ठा प्रदान की। उन्होंने लिखा : "हमारे जन-अध्यापकों को ऐसा उच्च स्थान प्रदान किया जाना चाहिये, जैसा उन्हे अबसे पहले न तो कभी दिया गया है और न इस समय उन्हें प्राप्त है और न पूँजीवादी समाज में उन्हें कभी प्राप्त हो सकता है। यह स्वत:-स्पष्ट सत्य है जिसके लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नही है। इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए हमें सुव्यवस्थित ढंग से, दृढतापूर्वक और अडिग रहकर काम करना चाहिए—उसके बौद्धिक विकास के लिए और हर प्रकार से उसे अपने उच्च दायित्व के लिये तैयार करने के लिए भी, और सबसे बढकर, सबसे बढकर, सबसे बढकर उसकी भौतिक स्थिति को बेहतर बनाने के लिए। हमें सुव्यवस्थित ढंग से..जन-अध्यापकों को

संगठित करने का काम और मजबूत करना चाहिये ताकि उन्हे पूंजीपति वर्ग के समर्थकों से, जैसा कि वे सभी बिना किसी अपवाद के अब तक सभी पूंजीवादी देशों मे रहे हैं, सोवियतों के समर्थकों मे परिवर्तित किया जा सके, और इस प्रकार उनके माध्यम से किसानो को पूंजीपति वर्ग के साथ बँधे रहने से अलग किया जा सके और उन्हें सर्वहारा वर्ग के साथ एकता स्थापित करने के लिए राजी किया जा सके।"

अध्यापकों को निरक्षर लोगों की सेवा में लगाने के लिए समझाने-बुझाने के साथ ही सोवियत सरकार ने अध्यापकों के भौतिक कल्याण की परिस्थितियो मे भी सुधार करने की कोशिश की। सरकार ने सार्वजनिक शिक्षा के लिए बड़ी उदारता के साथ पैसा खर्च किया। १६१८ में जन-कमिसार परिषद ने कई बार अध्यापकों का वेतन बढाने पर विचार किया। जनवरी के अध्यादेश के जरिये ही इस दिशा मे शुरूआत की जा चुकी थी जब नवम्बर और दिसम्बर १६१७ के वेतनों मे एकमुश्त रकम बढाने की मजूरी दे दी गयी थी।

जन-कमिसार परिषद ने अध्यापकों की वेतन-दर के बारे में २२ जून, १६१८ को एक अध्यादेश जारी करके प्राथमिक तथा माध्यमिक स्कूलों के अध्यापको का मासिक वेतन निर्धारित कर दिया। लम्बी सेवा के लिए वेतन-वृद्धि की प्रणाली भी आरम्भ की गई। लेनिन ने हमेशा अध्यापकों के जीवन की परिस्थितियो मे सुधार करने की माँग की। अध्यापको को कई विशेष सुविधाएँ दी गयी। उन्हे स्कूलों के पास रहने के लिए घर प्राप्त करने में प्राथमिकता दी गयी; जो नये स्कूल बनवाये गये उनमें अध्यापकों के रहने के लिए घर थे। अध्यापकों को चिकित्सा विशेषज्ञों, इंजीनियरों और कारखानों के अत्यन्त कुशल मजदूरों के बराबर वेतन दिया जाने लगा और उनका पद ऊँचा उठा दिया गया। वे स्थानीय सोवियतो के ही नही बल्कि सर्वोच्च सोवियत तक के सदस्य निर्वाचित किये गये।

निरक्षरता दूर करने में सबसे अच्छा काम करने वाले अध्यापकों को, और स्कूलो, जिलो, सामूहिक फार्मो तथा कारखानों को पुरस्कृत करने

के लिए शिक्षा मन्त्रालय, ट्रेड यूनियनों और श्रमिक जनता की स्थानीय सोवियतों ने विशेष धनराशि की मंजूरी दी। राज्य समिति अध्यापन की श्रेष्ठता की जांच-परख करके उन अध्यापकों, "संस्कृति-सैनिकों" और अन्य लोगों को पुरस्कार देती थी, जिनका काम विशेष रूप से सराहनीय होता था। विभिन्न प्रदेशों, जिलों और स्कूलों के बीच स्वस्थ प्रतिस्पर्द्धा को प्रोत्साहन दिया गया और उनमें जो सबसे अच्छे निकले उन्हें सम्मान, लोकप्रियता और साथ ही पुरस्कार भी प्रदान किये गये। पत्र-पत्रिकाओं में सर्वश्रेष्ठ अध्यापकों के काम का प्रचार किया जाता था। वे समाज के विभिन्न हिस्सों के बीच तथा संस्थाओं के बीच प्रतिस्पर्द्धा को बढ़ावा देते थे। प्रतिस्पर्द्धा का अर्थ होता था पारस्परिक सहायता और अभियान को श्रेष्ठतर बनाना।

क्रान्ति से पहले के जमाने के अध्यापकों को, जो नौकरशाहों तथा दफ्तरों के क्लर्कों को शिक्षा देने के लिए प्रशिक्षित किये गये थे, अब यह काम सौंपा गया कि वे शिक्षा को पूंजीपतियों के प्रभाव से मुक्त करें और अपने काम का सम्बन्ध समाजवादी संस्कृति के विकास के लिए जनता के संघर्ष के साथ जोड़ें। अन्तर्राष्ट्रवादी अध्यापकों की कांग्रेस में अपने भाषण में लेनिन ने मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षण-विज्ञान की एक मूलभूत प्रस्थापना प्रस्तुत की। उन्होंने कहा कि अध्यापकों को "समस्त संघर्षरत श्रमिक जनता का साथ देना चाहिए। नये अध्यापकों का काम यह है कि वे अपनी अध्यापन-सम्बन्धी गतिविधियों को समाज के समाजवादी संगठन के काम के साथ जोड़ दें।"

उनका काम यह था कि वे अध्यापकों और "संस्कृति-सैनिकों" की एक ऐसी नयी पीढ़ी तैयार करें जो छात्रों में शिक्षा को काम के साथ जोड़ने की भावना तथा क्षमता पैदा कर सकें, जो कि साम्यवाद का भौतिक तथा तकनीकी आधार है। पार्टी की विभिन्न संस्थाओं, शिक्षा-जन-कमिसारियट तथा अन्तर्राष्ट्रवादी शिक्षक संघ ने अध्यापकों की राज-नीतिक शिक्षा के बारे में लेनिन के आदेश को पूरा करने के लिए एक व्यापक अभियान आरम्भ किया। अध्यापकों की पूरी सेना, जो निरक्षरता

के विरुद्ध लड़ने और समाजवादी शिक्षा प्रदान करने के लिये पूरी तरह लैस थी, अन्ततः मैदान मे उतर पडी।

क्रान्ति के बाद कुछ ही वर्षों के अन्दर अध्यापक इस आन्दोलन के मँजे हुए सेनानी बन गये। उन्होने अपने प्रयासों और सोवियत सरकार की नीति के बीच सामजस्य स्थापित किया और वे अपनी सभाओं में प्रसिद्ध गीत "बुदेनोव्स्की" गाने लगे :

> हम हैं "लाल शिक्षक"
> हमारे बारे मे
> किसी दिन इतिहासकार को
> एक यशोगाथा लिखनी होगी।
> किस प्रकार उन दिनो मे
> जब रूस के स्कूलों पर संकट मँडरा रहे थे
> भूख से निढाल, पर इरादे के पक्के
> हम, आगे बढते ही रहे।
> कम्युनिस्ट पार्टी, हमारा नेतृत्व करो !
> हम तुम्हारे साथ हमेशा आगे बढते रहेंगे!
> मेहनतकश जनता की सहायता करने के लिए
> हम सब लेनिन की परम्परा को मानने वाले हैं
> हमारा सारा जीवन ही संघर्ष है !

आज के इतिहासकार को अब सोवियत अध्यापकों के बारे में बहुत कुछ कहने को है। जो कुछ उसे कहना है वह सारे का सारा अध्यापक के पक्ष मे ही है। ये लोग सोवियत शिक्षक, समाजवाद के प्रमुख निर्माता बन गये और उन्होंने निरक्षरता को दूर करने में एक अविस्मरणीय भूमिका अदा की। उन्होंने जन-साधारण के साथ अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किया और साक्षरता-अभियान को घर-घर पहुँचाने तथा उसे संगठित करने का मुख्य साधन बन गये। उन्होने स्वयं भी अधिक राजनीतिक चेतना प्राप्त की और अपने छात्रों मे भी चारों ओर की दुनिया के बारे में अधिक

जागरूकता पैदा की। और अन्ततः, शुद्धतः अपने श्रम केवल पर उसने "सोवियत शिक्षक" का उच्च पद प्राप्त किया ।

निरक्षरता के विरुद्ध अभियान के लिए प्रशिक्षित अध्यापको की एक सेना की आवश्यकता थी । लाखों-करोड़ो लोगों को वर्णमाला सिखाने के लिए हजारों विशेषज्ञ अध्यापकों की आवश्यकता थी । निरक्षरता दूर करने का काम इतना विस्तृत था कि उस समय जितनी संख्या मे अध्यापक उपलब्ध थे व सर्वथा अपर्याप्त थे। उनकी हैसियत एक गागर भर पानी जैसी थी जबकि लोगों की शिक्षा की प्यास बुझाने के लिए पूरे सागर की आवश्यकता थी । किरगीज, कजाख, ताजिक, उजवेक तथा तुर्कमेन जनतन्त्रो मे अध्यापकों की कमी विशेष रूप से उग्र थी, क्योंकि वहाँ जो इने-गिने स्थानीय अध्यापक थे भी उन्होंने अध्यापन का प्राथमिक प्रशिक्षण भी प्राप्त नही किया था । उनमें से कुछ धार्मिक स्कूलो मे और बाकी नव प्रचलित नयी प्रणाली के स्कूलों मे पढाते थे । वे निरक्षरता-विरोधी अभियान चलाने के लिए सर्वथा अयोग्य थे । इसलिए निरक्षर प्रौढ़ो को पढाने वाले अध्यापकों का प्रशिक्षण तत्काल आवश्यक हो गया था । निरक्षरता-विरोधी अभियान के आरम्भ काल मे, उन सभी लोगो को जो शिक्षित थे और अध्यापकों के रूप में काम करना चाहते थे बड़ी तीव्र गति से अध्यायन की प्रशिक्षा दी गयी । प्रशिक्षित अध्यापक उपलब्ध होने के समय तक निरक्षरता के विरुद्ध लड़ने का काम उन सभी लोगों ने किया जो पढे-लिखे थे । उन्होने निरक्षरों को पढ़ाने की प्रणालियो का थोडा-सा ज्ञान प्राप्त करके अपना काम आरम्भ कर दिया । जो थोडे-बहुत अध्यापक उपलब्ध थे उन्होने उनका मार्गदर्शन किया । अखबारों, पत्रिकाओ और शिक्षण-सम्बन्धी पत्रिकाओं मे निर्देश प्रकाशित करके और कभी-कभी पत्र-व्यवहार पाठ्यक्रमो के माध्यम से भी सहायता प्रदान की गयी । परन्तु अप्रशिक्षित अध्यापकों का यह समूह निरक्षरता के विरुद्ध युद्ध मे विजय नही प्राप्त कर सकता था । बहुत बड़ी संख्या मे अध्यापको को अल्प अवधि मे तीव्र गति से पूरे होने वाले पाठ्यक्रमों के माध्यम से प्रशिक्षण प्रदान करने के अलावा और कोई रास्ता नही था ।

परन्तु सरकार इस बात का भी पूरा ध्यान रखना चाहती थी कि शिक्षा का स्तर गिरने न पाये। सवाल पढ़ना, लिखना और थोड़ा-बहुत हिसाब लगाना सिखा देने का ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक क्रान्ति लाने का था। अनातोली लूनाचार्स्की ने लिखा, "शिक्षण-प्रक्रिया कार्य-प्रक्रिया भी है और इसीलिए हमें यह भी मालूम होना होना चाहिए कि हम कुछ दिशा मे जा रहे हैं और हम अपनी सामग्री का क्या उपयोग करना चाहते हैं। अगर सुनार का काम बिगड जाये तो सोना फिर से गलाया जा सकता है। अगर बहुमूल्य रत्न बिगड जायें तो उन्हें रद्द किया जा सकता है, लेकिन हमारी दृष्टि मे बड़े से बड़ा हीरा भी नवजात मनुष्य से अधिक मूल्यवान नही होता है। मनुष्य को बिगाड़ना या तो अपराध है या अनजाने मे किया गया बहुत बड़ा गुनाह…।" इसीलिए, यद्यपि निरक्षरता को मिटाने के काम मे बहुत-से संगठनों तथा संस्थाओं ने भाग लिया परन्तु प्रशिक्षण प्रणालियों को व्यवस्थित करने का अधिकार केवल शिक्षा मन्त्रालय को था। उसके आदेशों का पालन सभी अध्यापकों के लिए अनिवार्य था। इससे अध्यापन प्रक्रिया में समरूपता बनी रही और अध्यापको को निरक्षरो को पढ़ाने में यथा सभव श्रेष्ठतम सहायता मिली। शिक्षकों की मांग को पूरा करने के लिए सार्वजनिक शिक्षा विभाग ने अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए अल्पकालीन पाठ्यक्रमों का आयोजन किया। इस प्रकार के पाठ्यक्रमो की व्यवस्था हर जगह आवश्यकता के अनुसार की गयी। प्रशिक्षण की अवधि प्रशिक्षार्थी की उस समय की जानकारी के अनुसार एक से पांच महीने तक की होती थी। धार्मिक स्कूलों के अध्यापकों के लिए प्रसार पाठ्यक्रम भी संगठित किये गये। पुराने जमाने के अध्यापकों को, निरक्षरों और विशेष रूप से प्रौढो को पढाने की नयी तथा विशिष्ट प्रणालियां सिखाई गयी। अध्यापन की सारी प्रशिक्षा नि:शुल्क दी जाती थी।

इन अल्पकालीन पाठ्यक्रमों का उद्देश्य निरक्षरता-विरोधी सैनिक तैयार करना था। इस पाठ्यक्रम में सम्मिलित विषय थे मातृभाषा (वर्ण-विन्यास, प्राथमिक व्याकरण, शैली के आधारभूत सिद्धान्त, विचारों

ी मौखिक अभिव्यक्ति); गणित (गणित का प्रारम्भिक ज्ञान, रेखा-
णित); प्राकृतिक विज्ञान (प्रकृति के तीन क्षेत्रों का प्राथमिक ज्ञान,
ुनियादी भौगोलिक ज्ञान और स्थानीय लोक-साहित्य तथा परम्पराओं
का अध्ययन), अध्यापन की प्रणालियों, शिक्षा-व्यवस्था के सगठन, स्वास्थ्य-
रक्षा तथा सफाई का आवश्यक ज्ञान। अध्यापन की इतनी शिक्षा अध्या
पकों को निरक्षरता को दूर करने की क्षमता प्रदान करने के लिए पर्याप्त
सिद्ध हुई। उच्चतर पाठ्यक्रमों के लिए भी अध्यापकों के प्रशिक्षण स्कूल
स्थापित किये गये और इन अध्यापकों ने भी निरक्षरों को पढाने में भाग
लिया, परन्तु इस सघर्ष में निर्णायक भूमिका उन "गैर-पेशेवर अध्यापकों"
की थी जिन्होंने अल्पकालीन पाठ्यक्रमों के माध्यम से प्रशिक्षण प्राप्त
किया था।

मध्य एशियाई जनतन्त्रों में निरक्षरता-विरोधी अभियान के लिए
ऐसी अध्यापिकाओं की कमी, जिन्हें वहाँ के निवासियों की मातृभाषा और
उनकी जीवन-पद्धति की जानकारी हो, और भी कठिन समस्याओं का
स्रोत थी। इस कठिनाई को दूर करने के उद्देश्य से इन जनतन्त्रों के निर-
क्षरों के तथा पिछड़ी हुई औरतों के बीच काम करने के लिए अध्या-
पिकाओं को प्रशिक्षण देने वाले शिक्षण-संस्थानों की स्थापना की गयी।
प्रगतिशील विचारों वाली युवतियाँ आगे आयीं और शिक्षण के इन स्कूलों
में भरती हुईं। अध्यापकों के इस अग्रदल ने और स्त्रियों को आकर्षित
किया। शीघ्र ही मध्य एशियायी स्त्रियों के बीच निरक्षरता दूर करने
के काम में जुट जाने के लिए अध्यापिकाओं की एक पूरी सेना तैयार हो
गयी। शिक्षण-सम्बन्धी शोध-कार्य आरम्भ किया गया और नियमित अध्या-
पक प्रशिक्षित करने के लिए संस्थान स्थापित किये गये। शीघ्र ही यहाँ
से प्रशिक्षित अध्यापकों के दल निकलने लगे और उन्होंने जनता को शिक्षा
देने का भार संभाल लिया। युवतियाँ भी प्रशिक्षित अध्यापक बनने के लिये
बहुत बड़ी संख्या में तत्पर हुईं। धीरे-धीरे उनकी संख्या बढ़ती गयी,
और शीघ्र ही सोवियत अध्यापकों में स्त्रियों की संख्या आधी से अधिक हो
गयी।

ऐसे निरक्षर प्रौढों को पढाना, जिन्होने कई पीढियों से पुस्तक की सूरत तक नही देखी थी, ऐसा काम नही था जिसे विशेष रूप से प्रशिक्षित अध्यापको के बिना पूरा किया जा सकता। इस सीधे-सादे पर विशिष्ट काम के लिए अध्यापकों का विशेष प्रशिक्षण अनिवार्य था। अल्पकालीन प्रारम्भिक प्रशिक्षण पर्याप्त नही हो सकता था, क्योंकि हर कदम पर ऐसी नयी समस्याएँ उठ खड़ी होती थी, जिन्हे हल करने के लिए सैद्धान्तिक ज्ञान की अपेक्षा अनुभव की अधिक आवश्यकता थी। इन विशेष परिस्थितियों का सफलतापूर्वक सामना करने के लिए इस विषय पर प्रकाश डालने वाली अनेक पत्रिकाएँ प्रकाशित की गयी और उनका व्यापक रूप से प्रसार किया गया जैसे : अध्यापक गजट, कम्युनिस्ट शिक्षा, शिक्षा कार्यकर्त्ता, शिक्षण विश्वकोष, शिक्षण गृह-पाठ्यक्रम। प्रत्यक्ष शिक्षण के अतिरिक्त बहुत बड़े-बडे संस्करणों मे शिक्षण-प्रणालियाँ सीखने मे सहायता देने वाली पुस्तकें भी प्रकाशित की गयी जिनके नाम इस प्रकार के होते थे जैसे "अर्द्ध-साक्षरो के स्कूलो मे लिखना सिखाने की विधि", "निरक्षरो तथा अर्द्ध-साक्षरों के स्कूलो मे गणित पढ़ाने की विधियाँ।" "साक्षरता बढाओ" और "प्रौढ छात्रों के स्कूल" जैसी विशेष पत्रिकाएँ भी प्रकाशित की गयी, जिनका उद्देश्य था अध्यापकों तथा "संस्कृति-सैनिको" को प्रौढो को शिक्षा देने के उनके काम मे सहायता देना था।

सम्मेलनों मे, कांग्रेसो मे, भ्रमण कार्यक्रमो मे और अन्य स्थानों पर विचार-विमर्श तथा व्याख्यानों द्वारा इस प्रक्रिया को और बल दिया जाता था। विभिन्न विषयो के अध्यापको की कठिनाइयों को दूर करने के लिए समय-समय पर सम्मेलन आयोजित किये जाते थे। इनमें अध्यापक केंद्रीय कार्यकर्त्ताओं की रिपोर्टें सुनते थे। अपने अनुभवो का आदान-प्रदान करते थे। विभिन्न स्कूलों, संस्थाओ तथा संग्रहालयों मे जाते थे और अपनी विशेष समस्याओं का समाधान करते थे। इन भ्रमण-कार्यक्रमों, सम्मेलनों तथा कांग्रेसो से अध्यापकों के बौद्धिक क्षितिज को और व्यापक बनाने मे और फलस्वरूप निरक्षरों तथा अर्द्ध-साक्षरों को अधिक सफल अध्यापक

बनाने में सहायता मिली। 'संस्कृति सैनिकों' को परामर्श तथा सहायता देने के लिए विशेषज्ञों की 'गश्ती टोलियाँ' भी बनायी गयीं। इन सब बातों से पूरी प्रक्रिया को तेज करने और अध्यापन को श्रेष्ठतर कोटि का बनाने में बहुत सफलता मिली।

अध्यापकों की इस सेना में बहुमत उन "गैर-पेशेवर अध्यापकों" का जिन्हें इस अभियान को सफल बनाने का वास्तविक श्रेय है। इनमें ट्रेड यूनियनों के लोग, युवक कार्यकर्त्ता, विद्यार्थी, कलाकार, दफ्तरों के कर्मचारी और अन्य नौकरियाँ करने वाले लोग शामिल थे। युवतियाँ भी इस मुहिम में पीछे नही रही। उन्होंने बहुत बड़ी सख्या मे आगे आकर स्त्रियो के बीच, विशेष रूप से मध्य एशियाई जनतन्त्रों में, निरक्षरता के विरुद्ध बहुत उत्साह के साथ डटकर संघर्ष किया। निरक्षरता-विरोधी अभियान के प्रथम वर्षो में पूर्वी जनतन्त्रों के कुछ हिस्सो में ९० प्रतिशत अध्यापक ऐसे थे जिन्होंने केवल प्राथमिक शिक्षा ही प्राप्त की थी। जिन लोगो ने स्वयं ही केवल पढना और लिखना सीखा था, वे भी भरपूर उत्साह के साथ दूसरों को पढाने लगे। इस प्रकार निरक्षरता-विरोधी अभियान का वेग पर्याप्त संख्या में अध्यापक उपलब्ध न होने के कारण कभी मन्द नहीं होने पाया।

# अध्याय १२

## उपस्कर एवं उपकरण

क्रान्ति के समाप्त हो जाने के बाद लोग क्रान्ति के प्रवर्त्तकों के उस संघर्ष को, उन कठिन परिस्थितियों को भूलने लगते हैं जिनके बीच से क्रान्ति को निकालकर उन्होने सफलता का सुप्रभात देखा था। साक्षरता का पथ बहुत कंटकमय था और निरक्षरता-विरोधी कार्यकर्त्ताओं को एक-एक कांटा चुनकर मार्ग को साफ करना था। नयी सोवियत राज्यसत्ता अभी तक अपने शैशवकाल में थी। देश अभी तक गृहयुद्ध की लपटों में घिरा हुआ था। *विदेशी हस्तक्षेप अभी तक कुचला नही जा सका था।* मध्य एशिया में 'बास्मात्चा' (*स्थानीय सामन्तों के गुर्गों के* प्रतिक्रिया-वादी लुटेरे गिरोह) अभी तक उत्पात मचा रहे थे और देश की अर्थ-व्यवस्था अभी तक ध्वस्त पड़ी थी। प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ, धर्मोन्मादी और अज्ञान तथा निरक्षरता से उत्पन्न होने वाले अन्ध-विश्वास अभि-*यान के मार्ग में बाधा बने हुए थे। प्रौढ लोग या तो सकोच के कारण* या शिक्षा की उपयोगिता न समझ पाने के कारण स्कूल जाने को तैयार नही थे। जातीय तथा अन्य पूर्वाग्रह उनका विशेष रूप से स्त्रियों का स्कूल जाने का मार्ग रोके खड़े थे।

फिर भी लोगों ने हिम्मत नही हारी और निरक्षता के विरुद्ध लड़ाई पूरे दृढ़ संकल्प के साथ छेड़ दी गयी। पर्याप्त संख्या मे प्रशिक्षित कार्य-कर्त्ताओं के बिना, आवश्यक शास्त्रार्थों के बिना और परिवेश-संबंधी परिस्थितियों के बिना निरक्षरता-विरोधी सैनिक आगे बढ़ाते जा रहे थे। वे अज्ञानी प्रौढ़ों, अन्ध विश्वासी पिताओं और सामन्ती विचारों वाले पतियों के विरोधात्मक रवैयों के खिलाफ लड़े और जब तक विजय प्राप्त नहीं हो गयी तब तक वे निरक्षरता के विरुद्ध संघर्ष करते रहे।

जिन परिस्थितियों में संस्कृति-सैनिकों ने काम करना आरम्भ किया और जिस उत्साह के साथ उन्होंने काम किया उसका चित्र लेनिन पुरस्कार विजेता सोवियत किरगीज साहित्यकार चंगीज ऐतमातोव की 'दुइशेन' नामक कहानी में देखने को मिलता है। यह गल्प साहित्य के रूप में हमारे सामने आयी है पर यह कहानी वास्तविक इतिहास से बहुत भिन्न नहीं है और उसे दोहराना उपयोगी होगा। कामसोमोल के एक सदस्य दुइशेन ने निरक्षरता-विरोधी स्कूल खोला था। उन दिनों की याद करते हुए उसकी एक छात्रा कहती है:

"दुइशेन हमें खोज-खोजकर निकालने के लिए घर-घर गया।

"जब हमने पहले-पहल स्कूल के कमरे में कदम रखा तो हमने देखा कि फर्श पर बहुत-सा पयाल फैला हुआ है। यह हमारे बैठने की व्यवस्था थी···।

"इसके बाद दुइशेन ने दीवार पर लगी हुई एक रूसी की तस्वीर दिखायी।

"उसने कहा, 'यह लेनिन हैं'।

"मुझे वह तस्वीर जीवन-भर याद रहेगी···।

"दुइशेन बोला, बच्चो, मैं तुम्हें पढ़ना और लिखना सिखाऊँगा। मैं तुम्हें दिखाऊँगा कि अक्षर गिनतियाँ कैसे लिखी जाती हैं।

"सचमुच वह जो कुछ भी स्वयं जानता था वह सब उसने हमें पढ़ाया, और यह काम उसने सराहनीय धैर्य के साथ किया···।

"जब भी मैं सोचती हूँ तो मुझे उसके साहस पर आश्चर्य होता है कि उसने एक भी पाठ्य-पुस्तक के बिना, बच्चों की पहली किताब तक के बिना, इतने बुनियादी महत्व के काम का बीड़ा कैसे उठा लिया। जरा सोचिये, ऐसे बच्चों को पढ़ाना जिनकी सात पीढ़ी तक दादा-परदादा सभी निरक्षर थे।"

दुइशेन का उदाहरण इस प्रकार का अकेला उदारण नहीं है, उसके ऐसे हजारों लोग थे जो "साक्षरो, निरक्षरों को पढ़ाओ" की ललकार पर मैदान में कूद पड़े थे।

लेकिन यह हालत वह बहुत दिन तक नहीं रही। सांस्कृतिक क्रान्ति लम्बे-लम्बे डग भरती हुई आगे बढती गयी, स्कूल बनवाये गये, छापेखाने काम करने लगे और निरक्षरों को पढ़ाने के लिये बहुत बड़ी संख्या मे पाठ्य-पुस्तकें उपलब्ध हो गयी। पुस्तकालयो और वाचनालयो की स्थापना की गयी, संग्रहालय बनाये गये, और पढना सीखने मे सहायता देने वाली विभिन्न प्रकार की सामग्रियाँ उपलब्ध की गयी। सिनेमाघरों, थियेटरों, और रेडियो सभी को जनता को पढाने और निरक्षरता मिटाने के काम मे जुटा दिया गया।

लेनिन शिक्षा को एक बहुत बडी ताकत और पुस्तकों को उस ताकत को वश मे करने तथा उसका सदुपयोग करने का साधन मानते थे। प्रथम शिक्षा जन-कमिसार अनातोली लूनाचार्स्की ने उनके शब्दो को उद्धृत किया है: "हमे यथाशीघ्र पुस्तकें जनता तक पहुँचानी चाहियें। हमे पूरे रूस में अधिकतम सख्या मे पुस्तकों का वितरण करने की कोशिश करना चाहिए। समाजवादी निर्माण मे लेनिन पुस्तको को कितना महत्त्व देते थे यह सहकारिता के बारे मे उनके लेख से स्पष्ट है, जिसमें उन्होने कहा है कि सार्विक साक्षरता के बिना, उचित स्तर की कार्य-क्षमता के बिना और पूरी जनसख्या को पुस्तकें पढ़ाने की आदत डालने का पर्याप्त प्रशिक्षण दिये बिना समाजवादी निर्माण सभव नहीं है···।"

"पढ़ो, पढ़ो, पढो!" का जो नारा बुनियादी तौर पर सभी बच्चों के लिए दिया गया था, परन्तु जिसे बच्चों-बूढ़ों सभी ने समान रूप से अपना लिया, उसके लिए विशाल मात्रा में पाठ्य-पुस्तकों, निर्देशिकाओं, सन्दर्भ पुस्तकों, विश्वकोशो और कथा-साहित्य प्रकाशित करने की आवश्यकता थी। ये पुस्तकें केवल रूसी में ही नही बल्कि सोवियत जनता की निवासी विभिन्न भाषाओं मे प्रकाशित करनी थी, जिनमें एस्कीमो, वन्जारे लतगल और मिग्रेल आदि सभी शामिल थे। वर्णमाला से आरम्भ करके ज्ञान की सर्वाधिक उन्नति विवेचना तक सभी कुछ उसमे शामिल किया जाना था। प्राथमिक पाठ्य-पुस्तकों का प्रकाशन बुनियादी काम था, परन्तु उन्नत शिक्षा, विद्या तथा ज्ञान की पुस्तकों की

भी उपेक्षा नही की जा सकती थी। देश ने निरक्षरता के विरुद्ध युद्ध छेड़ रखा था। और सभी लोगों के बीच उच्चतर ज्ञान का प्रसार करने का बीडा उठा लिया था। सांस्कृतिक क्रान्ति उस समय तक सफल नही हो सकती थी जब तक कि हर आदमी को हर, स्कूल तथा कालेज को, हर पुस्तकालय तथा वाचनालय को सुगमता से तथा बिना किसी रोक-टोक के पुस्तकें उपलब्ध न हो। इसके अतिरिक्त हर विषय की और हर प्रकार की रुचि तथा आयु के पाठकों के लिए उपयुक्त पुस्तकों की आवश्यकता थी। यह सब कुछ बिना समय नष्ट किये करना था।

निरक्षरता-उन्मूलन को केवल पढना और लिखना सिखा देने तक ही सीमित नही माना गया बल्कि इसका अर्थ यह भी समझा गया कि लोगों मे अखबार, पत्रिकाएं तथा पुस्तकें पढने की आदत पैदा हो ताकि नव-साक्षरो को उन राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक परिस्थितियों की कुछ झलक मिल सके, जिनमें वे हित थे और वे अपने भविष्य के निर्माण में भाग ले सकें।

अक्तूबर क्रान्ति के दूसरे ही दिन सोवियत सरकार ने छापेखानों के बारे में अपना अध्यादेश जारी किया और इसके दो महीने बाद सरकारी प्रकाशन गृह की स्थापना के बारे में एक और आदेश जारी किया। छापेखानों से सम्बन्धित अध्यादेश के अनुसार सारे छापेखानों, कागज के भण्डार, प्रकाशनगृह और पुस्तकों के वितरण की पूरी व्यवस्था सोवियतों को सौंप दी गयी। छापेखाने, जो निरक्षरता के विरुद्ध युद्ध मे सबसे आवश्यक अंग थे, जनता के हाथ मे आ गये। छापेखाने फौरन अपने काम में जुट गये और पहले ही महीने के दौरान प्रकाशन का काम आरम्भ हो गया पाठ्य-पुस्तकें अविराम धारा के रूप में आने लगी। निरक्षरता के विरुद्ध लड़ाई चलाने के शस्त्रास्त्र, सार्विक साक्षरता की स्थापना के लिए आवश्यक कच्चा माल तैयार हो गया था।

राज्यसत्ता के नियन्त्रण मे छापेखानों ने बड़ी तेजी से प्रगति की। पाठ्य-पुस्तकें न केवल निरक्षरों के लिए छापी गयीं, बल्कि सभी श्रेणियों के लिए पाठ्य-पुस्तकें, विज्ञान तथा टेक्नोलोजी की विशेष पुस्तकें,

साहित्य तथा सामान्य विषयों की पुस्तकें और हर प्रकार की अन्य पाठ्य-सामग्री भी जनता की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बहुत बड़े पैमाने पर तैयार की गयी। जनता की इस जिज्ञासा को सन्तुष्ट करने के लिए कि संसार मे क्या हो रहा है, क्रान्ति को कैसी सफलता मिल रही है और समाजवादी निर्माण की प्रगति कैसी है बहुत बडी संख्या मे अखबार प्रकाशित किये गये। १६१३ मे रूस में कुल ८५६ समाचारपत्र प्रकाशित होते थे। १६१३ मे सभी समाचारपत्रों की कुल प्रतियों की संख्या मिलाकर प्रतिदिन २७,००,००० होती थी। १६३८ मे वह बढकर ३,८०,००,००० हो गयी। अन्य पाठ्य-सामग्री की संख्या में भी दिन दूनी रात चौगुनी प्रगति हुई।

इतने बडे पैमाने पर पाठ्य-सामग्री के प्रचार, प्रसार से लोगों में, जिन्होंने पढना अभी सीखा ही था, न केवल रुचि पैदा हुई बल्कि उनमे पढने की आदत भी पैदा हुई। व्यापक पैमाने पर पढने की इस आदत से सांस्कृतिक आन्दोलन को सहायता मिली और अधिक पुस्तकों, पुस्तकालयों तथा वाचनालयों की मांग लोगों मे बढी। पुस्तकालयों तथा वाचनालयों के फलस्वरूप पढ़ने की इच्छा जागृत हुई। पुस्तकालयों का उल्लेख करते हुए लेनिन ने कहा था, "इससे जनता की ज्ञान प्राप्त करने की उत्कट लालसा अधिक तेजी से बढेगी, गहरी होगी और अधिक प्रभावशाली बनेगी। तभी जाकर शिक्षा की दिन दूनी रात चौगुनी प्रगति होगी" (शिक्षा जन-कमिसारियट का काम)।

लेनिन ने सोवियत संघ मे पुस्तकालयों को सामाजिक तथा आर्थिक मामलात से सीधा सम्बन्ध रखने वाली संस्थाओ का स्थान प्रदान किया। वह पहले आदमी थे जिन्होने यह बात कही कि सार्वजनिक पुस्तकालयो की सारी गतिविधियो को राष्ट्र के राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक काम के साथ जोड दिया जाना चाहिए। लेनिन ने इस बात पर जोर दिया कि जन-साधारण के व्यापकतम वर्गों को पुस्तकालयों में प्रवेश पाने का अवसर मिलना चाहिए। पुस्तकालय तथा वाचनालय आत्म-शिक्षा के शक्तिशाली स्कूल बन गये।

जिस तरह स्कूलों की विस्तृत श्रृंखला बनायी गयी थी उसी प्रकार लेनिन ने देश के पुस्तकालयों को भी सुगठित प्रणाली के रूप मे एकबद्ध कर देने और उनके द्वार हर व्यक्ति के लिए खोल देने की योजना बनायी। पुस्तकालयों के बारे में लेनिन ने जिस प्रथम सोवियत अध्यादेश पर हस्ताक्षर किये थे वह १६२० में जन-कमिसार परिषद की ओर से लागू किया गया "रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतन्त्र में पुस्तकालयों के केन्द्रीयकरण के बारे मे" अध्यादेश था। इसके अनुसार बिना किसी अपवाद के सभी पुस्तकालयों के द्वार सर्वसाधारण के लिए खोल दिये गये। पुस्तकालय विनियमों में यह "व्यवस्था रखी गयी है कि प्रत्येक नागरिक बिना किसी भेदभाव के किसी भी पुस्तकालय को नि:शुल्क इस्तेमाल कर सकता है और पुस्तकालयों को स्वयं पाठक को जो पुस्तकें वह चाहता हो उन्हे प्राप्त करने का हर अवसर प्रदान करना चाहिए" (लाइब्रेरीज इन द यू० एस० एस० आर०, ओ० एस० चुबारयान, पृष्ठ २७-२८)।

निरक्षरता को मिटाने और पुस्तकों के प्रकाशन के साथ ही साथ सरकार ने सार्वजनिक पुस्तकालयों की एक विस्तृत व्यवस्था स्थापित करने तथा उसे बढ़ाने पर ध्यान केन्द्रित किया। साक्षरता अभियान में सुविधा पहुँचाने के लिए बहुत बडी संख्या में पुस्तकालय तथा वाचनालय खोले गये। नि:शुल्क पुस्तकालयों की एक श्रृंखला स्थापित की गयी। सरकारी पुस्तकालयो के अतिरिक्त ट्रेड यूनियनों, फैक्टरियों और सामूहिक फार्मों की ओर से भी अनेक पुस्तकालय तथा वाचनालय खोले गये।

भरपूर कोशिशो के बावजूद, पुस्तकालय निरक्षरता-विरोधी अभियान की सफलताओ के साथ कदम से कदम मिलाकर नही चल पा रहे थे। इसलिए १६२५ और १६३० के बीच बहुत कुछ निरक्षरता-विरोधी अभियान के ही ढंग पर एक 'पुस्तकालय अभियान' आरम्भ किया गया। इस अभियान ने मुख्यत: देहातों को अपने प्रयासों का केन्द्र बनाया जहाँ पाठ्य-सामग्री की आवश्यकता बडी तेजी से बढ़ रही थी। गाँवों में पुस्तकालय खोलने के लिए छात्रों तथा बुद्धिजीवियों ने अपनी इच्छा से

पुस्तकें दान की। अर्थतन्त्र की प्रगति के साथ-साथ जब सरकारी प्रकाशन-गृहों से पर्याप्त संख्या में पुस्तकें प्रकाशित होने लगी तो पुस्तकालय भी अधिकाधिक समुचित रूप से संपन्न होते गये। बहुत ही थोड़े समय में लेनिन का ५०,००० पुस्तकालयों तथा वाचनालयों का सपना लक्ष्य से अधिक पूरा हो गया। पुस्तकालयों तथा वाचनालयों की शृंखला पूरे देश में फैल गयी थी। हर बस्ती, बड़े कारखाने, संस्थान तथा कालेज में एक पुस्तकालय तथा एक वाचनालय स्थापित किया गया।

पुस्तकालय तथा वाचनालय सोवियत शिक्षा-पद्धति के स्नायु-केन्द्र बन गये। गैर-रूसी जनतन्त्रों में पुस्तकालयों की संख्या विशेष रूप से तेजी के साथ बढ़ी। १९२२ में आजरबैजान सोवियत समाजवादी जन-तन्त्र में केवल छह पुस्तकालय थे, जिनकी संख्या १९३९ मे बढकर ८४१ हो गयी। उजबेक सोवियत समाजवादी जनतन्त्र मे १९२२ मे कोई भी ग्राम पुस्तकालय नहीं थे, लेकिन १९३९ में वहां ९७५ पुस्तकालय हो गये थे।

पुस्तकालयों में सभी विषयो की आधुनिक तथा क्लासिकी पुस्तकें थीं। उदाहरण के लिए, दुशांबे मे फिरदौसी पुस्तकालय बहुत बडी इमारत मे स्थित है और वहां सारी दुनिया की पुस्तकों के रूसी तथा ताजिक भाषाओ मे अनुवाद मौजूद है। वहां भारतीय पुस्तकों का भी एक खंड है। इस पुस्तकालय की संचालिका अत्यंत सुयोग्य तथा जानकार महिला है। इस पुस्तकालय मे प्राचीन क्लासिकी पाडुलिपियों का भी एक खंड है, और यहां शोध-कार्य तथा सामान्य पठन दोनों ही कि सुविधा दी जाती है। छोटे-छोटे नगरों में भी इस तरह के पुस्तकालय है। गांवो मे भी लोगों के लिए पुस्तकों तथा पाठ्य-सामग्री के अच्छे भंडार उपलब्ध रहते हैं।

लेकिन एक जगह पर स्थित पुस्तकालय सुदूर स्थानों मे रहने वाले लोगों की आवश्यकताओं को ठीक से पूरा नही कर सकते थे। और जहां लोग बहुत छोटे-छोटे समुदायों मे रहते थे वहां भी उनका पूरा उपयोग नही हो सकता था। इस प्रकार के लोगों की सेवा के लिए

विशेष प्रकार के चलते-फिरते पुस्तकालय स्थापित किये गये। "चलते-फिरते पुस्तकालयों का व्यापक रूप से प्रचलन है। वे केवल पुस्तकों के वितरण का काम नहीं करते हैं। मास्को के सरकारी पुस्तकालय संस्थान के छात्रो ने एक मोटर-बस पुस्तकालय का डिज़ाइन तैयार किया है जो पाँच हजार पुस्तकें लेकर चलता है। इसके तीन खंड होते है—एक सूची के लिए, दूसरा जिसमे अल्मारियाँ होती हैं जिनमे दो हजार पुस्तकें रहती हैं और उसी मे लाइब्रेरियन की मेज होती है जहा पुस्तकें दी जाती हैं तथा वापस ली जाती हैं और जानकारी तथा सलाह दी जाती है, और तीसरे मे पाँच सौ पुस्तको का एक छोटा पुस्तकालय होता है उसमें पाठकों की सुविधा के लिए तह हो जाने वाली कुर्सियाँ तथा मेज़ें भी होती हैं। इस खंड का सारा सामान उतार कर किसी भी गाव के खुले खेत मे लगा दिया जा सकता है, या यदि कोई कमरा उपलब्ध हो तो वहाँ सजाया जा सकता है। देहातों में इन चलते-फिरते पुस्तकालयों की बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा की जाती है···" (बीट्रिस किंग, **रशा गोज टु स्कूल**, पृष्ठ १२६)।

समाचारपत्रो तथा अन्य पत्र-पत्रिकाओं के लिए सोवियत जनता की तीव्र लालसा को संतुष्ट करने के लिए गाँवों, कारखानों तथा अन्य स्थानों में जन-साधारण के लिए पढने की सुविधाएं उपलब्ध करने के उद्देश्य से 'लाल कोने' स्थापित किये गये। जन-गृह तथा कृषक-गृह बनाये गये। ये उच्चतर कोटि के थे। इनमें विविधतम प्रकार की शिक्षा संस्थाएं होती थी। इनमे बड़े-बडे पुस्तकालय, सभा-भवन, खेल कूद के मैदानों, थिएटर, सिनेमाघर और रेडियो की व्यवस्था रहती थी। प्रत्येक औद्योगिक प्रतिष्ठान मे तथा हर सामूहिक फार्म में श्रमिकों के क्लब स्थापित किये गये। ये बडी-वडी इमारतो मे थे, जिनमे मजदूरों के ठहरने के लिये कमरे, थिएटर और सगीत कक्ष होते थे।

जन-साधारण के बीच शिक्षा का प्रसार करने के लिए सिनेमा तथा रेडियो का व्यापक रूप से उपयोग किया गया। यूनेस्को के अनुसार थिए-

टरों, सिनेमाघरों, संगीत भवनों, संग्रहालयों तथा पुस्तकालयों मे जाने वालों की संख्या की दृष्टि से सोवियत संघ का संसार में पहला स्थान है।

इनके अलावा संस्कृति तथा विश्राम के उद्यान भी प्रौढ़ शिक्षा के केन्द्र हैं। यहाँ साधारण शिक्षा-सामग्री मिलती है। यहाँ अपने-अपने क्षेत्रों के प्रमुख लोग खुले आकाश के नीचे व्याख्यान देते हैं। कला मे रुचि रखने वालो के लिए खुली जगहों मे कक्षाओं की व्यवस्था है। कभी-कभी वहाँ बैठकर अध्यापक प्रश्नों के उत्तर भी देते हैं।

सोवियत संघ मे संग्रहालयों तथा स्थायी प्रदर्शनियों ने अर्द्ध-साक्षरों के लिए स्कूलों का ही काम किया। उन्होंने सुव्यवस्थित ढंग से विभिन्न विकासक्रमों को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे प्रस्तुत किया। चित्रों, मानचित्रों, नक्शों और वहाँ पर प्रदर्शित अन्य वस्तुओं को देखकर ही आदमी देश के इतिहास, भूगोल, भूगर्भ-सम्बन्धी परिस्थितियों और उसकी कृषि-सम्बन्धी तथा औद्योगिक क्षमताओं के बारे में बहुत कुछ सीख सकता है और यह जान सकता है कि समाजवादी निर्माण के दौरान मनुष्य किस प्रकार प्रकृति के वरदानों का लाभ उठा रहा है और विज्ञान तथा टेक्नोलोजी की सहायता से किस प्रकार जनता की समृद्धि के लिए काम कर रहा है। हर प्रदर्शनी तथा संग्रहालय में प्रशिक्षित गाइडों की व्यवस्था है जो दर्शक को सारी चीजें पूरी तरह समझाते हैं और वहाँ से जो भी निकलता है वह अपने ज्ञान में कुछ वृद्धि किये बिना नहीं निकलता। इन संग्रहालयों ने ज्ञान को जीवन के साथ जोड़ देने वाले उच्च कोटि के माध्यमों के रूप में काम किया और निरक्षरों को सुगमतापूर्वक शिक्षितों की पाँतों मे प्रवेश पाने में सहायता दी। पुस्तकालयों की तरह संग्रहालयों ने भी बच्चों तथा प्रौढ़ों की शिक्षा मे अपनी भूमिका निरन्तर अदा की है। रूसी संग्रहालय सचमुच शिक्षाप्रद होते हैं। व्याख्यानों, पाठ्यक्रमों तथा सम्मेलनों का आयोजन करने के लिए व्याख्यान संगठन संग्रहालय सेवा का एक अंग है। इन्होंने सांस्कृतिक तथा वैज्ञानिक केन्द्रों के रूप में बहुत बड़ी भूमिका अदा की।

धीरे-धीरे संघ में सम्मिलित सभी जनतन्त्रों तथा स्वायत्त जनतन्त्रों

में क्लबों, पुस्तकालयों, संग्रहालयों, थिएटरों और सिनेमाघरों की एक व्यापक शृंखला स्थापित कर दी गयी। आज सोवियत संघ में १,३४,००० से अधिक क्लब तथा संस्कृति-प्रासाद, १,१४४ संग्रहालय, ३९ बड़े फिल्म स्टूडियो और १,५७,००० स्थायी तथा चलते-फिरते फिल्म दिखाने के यूनिट, ३,६०,००० पुस्तकालय जिनमें कुल मिलाकर ३ अरब से अधिक पुस्तकें हैं, ५४७ नाट्यशालाएं तथा संगीत भवन है, जहां ४२ विभिन्न भाषाओं में कार्यक्रम प्रस्तुत किये जाते हैं। उजबेकिस्तान में २५, कज़ाखस्तान में २४, मोल्दाविया में ८, किरगीजिया मे ६, ताजिकिस्तान मे १० और तुर्कमेनिया मे ६ नाट्यशालाए है; । इन सभी जनतन्त्रों में क्रान्ति से पहले एक भी जातीय नाट्यशाला नही थी। इन संस्थाओं ने जनता के शैक्षिक तथा सांस्कृतिक विकास मे बहुत योग दिया, और प्रत्यक्ष रूप से न सही पर परोक्ष रूप से ही सही देश से निरक्षरता को मिटा देने की प्रक्रिया को गति प्रदान की। इन पूरक तत्वों के बिना निरक्षर जन-साधारण को केवल सीधे शिक्षा देने से शायद इतने थोड़े समय मे शत प्रतिशत साक्षरता प्रदान करने में सफलता न मिलती।

टरों, सिनेमाघरो, संगीत भवनों, संग्रहालयो तथा पुस्तकालयो मे जाने वालों की संख्या की दृष्टि से सोवियत संघ का संसार मे पहला स्थान है।

इनके अलावा संस्कृति तथा विश्राम के उद्यान भी प्रौढ़ शिक्षा के केन्द्र हैं। यहाँ साधारण शिक्षा-सामग्री मिलती है। यहाँ अपने-अपने क्षेत्रों के प्रमुख लोग खुले आकाश के नीचे व्याख्यान देते हैं। कला मे रुचि रखने वालो के लिए खुली जगहों मे कक्षाओ की व्यवस्था है। कभी-कभी वहाँ बैठकर अध्यापक प्रश्नों के उत्तर भी देते हैं।

सोवियत संघ में संग्रहालयों तथा स्थायी प्रदर्शनियो ने अर्द्ध-साक्षरों के लिए स्कूलो का ही काम किया। उन्होने सुव्यवस्थित ढंग से विभिन्न विकासक्रमो को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे प्रस्तुत किया। चित्रो, मानचित्रों, नक्शों और वहाँ पर प्रदर्शित अन्य वस्तुओं को देखकर ही आदमी देश के इतिहास, भूगोल, भूगर्भ-सम्बन्धी परिस्थितियों और उसकी कृषि-सम्बन्धी तथा औद्योगिक क्षमताओ के बरे मे बहुत कुछ सीख सकता है और यह जान सकता है कि समाजवादी निर्माण के दौरान मनुष्य किस प्रकार प्रकृति के वरदानो का लाभ उठा रहा है और विज्ञान तथा टेक्नोलोजी की सहायता से किस प्रकार जनता की समृद्धि के लिए काम कर रहा है। हर प्रदर्शनी तथा संग्रहालय मे प्रशिक्षित गाइडो की व्यवस्था है जो दर्शक को सारी चीजें पूरी तरह समझाते हैं और यहाँ से जो भी निकलता है वह अपने ज्ञान में कुछ वृद्धि किये बिना नहीं निकलता। इन संग्रहालयों ने ज्ञान को जीवन के साथ जोड़ देने वाले उच्च कोटि के माध्यमो के रूप में काम किया और निरक्षरों को सुगमतापूर्वक शिक्षितों की पाँतो मे प्रवेश पाने मे सहायता दी। पुस्तकालयों की तरह संग्रहालयों ने भी बच्चों तथा प्रौढ़ों की शिक्षा मे अपनी भूमिका निरन्तर अदा की है। रूसी संग्रहालय सचमुच शिक्षाप्रद होते हैं। व्याख्यानों, पाठ्यक्रमों तथा सम्मेलनों का आयोजन करने के लिए व्याख्यान संगठन संग्रहालय सेवा का एक अंग है। इन्होंने सांस्कृतिक तथा वैज्ञानिक केन्द्रो के रूप में बहुत बड़ी भूमिका अदा की।

धीरे-धीरे संघ में सम्मिलित सभी जनतन्त्रों तथा स्वायत्त जनतन्त्रों

मे क्लबों, पुस्तकालयों, संग्रहालयों, थिएटरों और सिनेमाघरों की एक व्यापक शृंखला स्थापित कर दी गयी। आज सोवियत संघ में १,३४,००० से अधिक क्लब तथा संस्कृति-प्रासाद, १,१४४ संग्रहालय, ३६ बड़े फिल्म स्टूडियो और १,५७,००० स्थायी तथा चलते-फिरते फिल्म दिखाने के यूनिट, ३,६०,००० पुस्तकालय जिनमें कुल मिलाकर ३ अरब से अधिक पुस्तकें हैं, ५४७ नाट्यशालाएं तथा संगीत भवन है, जहां ४२ विभिन्न भाषाओं में कार्यक्रम प्रस्तुत किये जाते है। उजबेकिस्तान में २५, कजाखस्तान में २४, मोल्दाविया में ८, किरगीजिया मे ६, ताजिकिस्तान मे १० और तुर्कमेनिया मे ६ नाट्यशालाए हैं; । इन सभी जनतन्त्रों में क्रान्ति से पहले एक भी जातीय नाट्यशाला नही थी। इन सस्थाओं ने जनता के शैक्षिक तथा सांस्कृतिक विकास में बहुत योग दिया, और प्रत्यक्ष रूप से न सही पर परोक्ष रूप से ही सही देश से निरक्षरता को मिटा देने की प्रक्रिया को गति प्रदान की। इन पूरक तत्त्वों के बिना निरक्षर जन-साधारण को केवल सीधे शिक्षा देने से शायद इतने थोड़े समय में शत प्रतिशत साक्षरता प्रदान करने मे सफलता न मिलती।

# अध्याय १३

## प्रहार

निरक्षरता की समस्या काफी जटिल थी और उसे विभिन्न परिस्थितियों के प्रसंग मे ही हल किया जा सकता था। निरक्षरता पर प्रहार करने की योजना व्यक्ति उसकी और परिस्थिति के अनुसार प्रत्येक स्त्री या पुरुष की आयु के अनुसार तथा इस बात के अनुसार कि वह किस हद तक निरक्षर या साक्षर है अलग-अलग रणनीति अपनानी पड़ती थी। हर परिस्थिति से अलग ढंग से निबटना होता था। निरक्षर बच्चे भी थे, निरक्षर किशोर भी थे और निरक्षर प्रौढ़ भी थे। प्रौढ लोगो को शिक्षा देने की प्रक्रिया वही नही हो सकती थी जो बच्चों के लिए होती। निरक्षर स्त्रियो की, विशेष रूप से गैर-रूसी जातियों की विवाहित स्त्रियों की, समस्याएँ विभिन्न प्रकार की तथा अधिक जटिल थी। स्त्रियों में निरक्षरो का प्रतिशत अनुपात पुरुषो की अपेक्षा अधिक था। अलग-अलग लोग अलग-अलग हद तक निरक्षर थे। कुछ न पढ सकते थे न लिख सकते थे। कुछ पढना जानते थे लेकिन लिख नही सकते थे; कुछ ऐसे थे जो पढना और लिखना तो जानते थे पर गलतियाँ बहुत करते थे। लोगों के सामान्य सांस्कृतिक स्तर मे भी बहुत व्यापक अन्तर था।

निरक्षरता के विरुद्ध लड़ाई के लिए विस्तृत जानकारी और पूरे आँकड़ों को ध्यान मे रखते हुए उचित ढंग से योजना बनाकर काम करने की आवश्यकता थी। न केवल यह जानना आवश्यक था कि किस इलाके मे कुल कितने निरक्षर है, बल्कि यह भी जानना आवश्यक था कि उनके ज्ञान का स्तर क्या है, पढने वाला पुरुष है अथवा स्त्री, उसकी आयु क्या है, उसके रहन-सहन की परिस्थितियाँ क्या हैं और वह काम क्या करता

है। पाठ्यक्रमों तथा शिक्षण की योजना बनाने के लिए लोगों को अलग-अलग श्रेणियों में बांटना बहुत महत्वपूर्ण था। उन्हें निम्न श्रेणियों में बांटा गया :

१. सर्वथा निरक्षर (जो न पढ़ना जानते थे न लिखना);
२. जो पढ लेते थे पर लिख नहीं पाते थे;
३. जो अशुद्धियों के साथ पढ़ तथा लिख सकते थे;
४. जो पढ़ना और लिखना तो जानते थे पर प्राथमिक हिसाब लगाना नही जानते थे।

छात्रों को इस प्रकार अलग-अलग श्रेणियों मे बांट देने से कक्षाओं तथा पाठ्यक्रमों के संगठन में सहायता मिली। इस काम के लिए निरक्षरों की जनगणना की गयी और उनकी सूचियां तैयार की गयीं।

कुछ लोग शारीरिक अक्षमताओ का भी शिकार थे और उन्हें पढ़ाने के लिए विशेष अध्ययन प्रक्रिया की आवश्यकता थी। अन्धों, गूंगों तथा बहरों और मन्दबुद्धि लोगों के उसी ढंग से नही पढाया जा सकता था जैसे सभी क्षमताओ से सम्पन्न लोगों को पढ़ाया जाता है। उनका वर्ग ही अलग था।

सार्विक साक्षरता सरकार की घोषित नीति थी। इस लिए और कोई भी व्यक्ति ऐसा नही रहने दिया जा सकता था जिसकी शिक्षा की ओर ध्यान न दिया जाये। वह कही भी रहता हो और उसकी स्थिति कुछ भो हो, उसे शिक्षा प्रदान करना राज्य का दायित्व था। यदि किसी जाति विशेष के लोगो की लिपिबद्ध भाषा नही थी तो उन्हें भाषा देनी थी। अगर किसी स्त्री को घर की चहारदीवारी में परदे के पीछे रखा जाता था तो संस्कृति-सैनिक स्वयं उसके घर मे परांजा (बुरका) पहनकर जाते थे और उसे घर से निकालकर स्कूल लाते थे; और अगर प्रौढ श्रमिक पढ़ने को तैयार नही होते थे तो उनके पूर्वाग्रहों का शमन किया जाता था ताकि वे पढने के लिए राजी हो। विशेष रूप से प्रौढों के बीच निरक्षरता दूर करने की समस्या बहुत जटिल थी। फिर भी सोवियत जनता ने बहुमुखी प्रहार करके उसे बहुत थोड़े समय के अन्दर ही मिटा दिया।

स्कूल खोले गये। जहाँ स्कूल बहुत दूर होते थे वहाँ बच्चों को स्कूल तक जाने और स्कूल से वापस आने के लिए मुफ्त यात्रा की सुविधा भी दी जाती थी।

इसके साथ ही इन जनतन्त्रों की सरकारों ने खानाबदोशों को बस जाने पर राजी करने के लिए उनके पडावों के पास गाँव बसाये और सिंचाई की सुविधा प्रदान की। यह नियम था कि जब भी कोई गाँव बसाया जाता था तो उसमे सबसे पहले स्कूल और दवाखाना जरूर बनाया जाता था। इन सब बातों से निरक्षरता-विरोधी अभियान में बडी सहायता मिली।

## (२) "बच्चे का दशक"

सोवियत मनुष्य के जीवन में वह पहला 'कानून' जिसका उसे सचेतन रूप से पालन करना पड़ता है वह है अनिवार्य शिक्षा का कानून। सार्विक अनिवार्य साक्षरता का कानून हर बच्चे के जीवन में वह पहला 'कानून' रहा है और अब भी है जिसके माध्यम से उसका न केवल एक अधिकार से बल्कि एक कर्त्तव्य से भी सामना होता है। यह अधिकार इसलिए है कि वह स्वयं अपनी भलाई के लिए सीखता है, और कर्त्तव्य इसलिए कि वह सबकी भलाई के लिए सीखता है। हर व्यक्ति को 'विज्ञान के चमत्कारों तथा संस्कृति की उपलब्धियों' मे हिस्सा बंटाने का अधिकार है और इसके साथ ही उसका यह कर्त्तव्य भी है कि वह समाज की भलाई के लिए इन्हें समृद्ध बनाये !

क्रान्ति के बाद के दशक को "बच्चों का दशक" कहा जा सकता है, क्योंकि इसी दशक मे सोवियत भूमि मे बच्चों को शिक्षा देने का—साक्षर बच्चों की एक पूरी पीढी तैयार करने का गम्भीरतापूर्वक प्रयास किया गया। देश ऐसे प्रौढ नहीं चाहता था जो अनगढ़ पदार्थ के बने हों। यह बात स्वत: सिद्ध सत्य के रूप में स्वीकार की जा चुकी थी कि साक्षरता बच्चे के जीवन में शीघ्रतम आरम्भ होनी चाहिए। स्कूल जाने की

## (१) खानाबदोश

मध्य एशिया मे कजाख, किरगीज, तुर्कमेन और ताजिक जनतन्त्रों के खानाबदोश इतने पिछड़े हुए थे कि उनमें एक भी साक्षर व्यक्ति नही था। लगातार एक जगह से दूसरी जगह घूमते रहने के कारण उनकी समस्याएं विशेष प्रकार की थी। गर्मियों में वे छोटी-छोटी टोलियों में स्तेपी के मैदानों में रहते थे। उनके घूमते-फिरते रहने की आदतों के कारण खानाबदोशों के बीच निरक्षरता-विरोधी अभियान को बहुत बडी और अजीब कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। साधारण स्कूल घूमती-फिरती रहने वाली आबादी की सेवा नहीं कर सकते थे और बहुत दूर रहने वाले लोगों को पढ़ने के लिए एक जगह नही लाया जा सकता था। इस समस्या को हल करने के लिए अध्यापक स्वयं "चलता-फिरता स्कूल" बन गया

खानाबदोशों की हर टोली की जिम्मेदारी सांस्कृतिक अभियान के एक अध्यापक को सौंप दी गयी। वह एक चरागाह से दूसरी चरागाह तक अपने छात्रों के साथ घूमता-फिरता था। जिले के शिक्षण-प्रणालियों के संगठनकर्त्ता हमेशा घोड़ों पर सवार एक शिविर से दूसरे शिविर में जाते रहते थे।

इसमे एक प्रमुख भूमिका पशुपालकों के क्लबो और लाल 'यूर्ताओं' की रही जो शिविरों के क्षेत्र मे खानाबदोशों के क्लबो का काम देने के लिए बनाये गये थे। इन क्लबों और यूर्ताओं के कार्यकर्त्ताओं का मुख्य काम निरक्षरता को मिटाना, चिकित्सा-संबन्धी तथा कानूनी सहायता प्रदान करना और खानाबदोशों के बीच समाजवादी संस्कृति फैलाना था। प्रौढ़ों को अलग-अलग भी पढाया जाता था और समूहों के रूप में भी, और उनके बच्चों के लिए नियमित स्कूल संगठित किये गये थे। ये स्कूल एक गांव से दूसरे गाँव में जा-जाकर खानाबदोशों के बच्चो को पढाते थे। बाद में चलकर सुदूरवर्ती पहाड़ी चरागाहों में रहने वाले खानाबदोशों पशुपालको के बच्चों के लिए बोर्डिंग स्कूल तथा कम्यून

स्कूल खोले गये। जहाँ स्कूल बहुत दूर होते थे वहाँ बच्चों को स्कूल तक जाने और स्कूल से वापस आने के लिए मुफ्त यात्रा की सुविधा भी दी जाती थी।

इसके साथ ही इन जनतन्त्रों की सरकारों ने खानाबदोशों को बस जाने पर राजी करने के लिए उनके पड़ावों के पास गाँव बसाये और सिंचाई की सुविधा प्रदान की। यह नियम था कि जब भी कोई गाँव बसाया जाता था तो उसमें सबसे पहले स्कूल और दवाखाना जरूर बनाया जाता था। इन सब बातों से निरक्षरता-विरोधी अभियान में बड़ी सहायता मिली।

## (२) "बच्चे का दशक"

सोवियत मनुष्य के जीवन में वह पहला 'कानून' जिसका उसे सचेतन रूप से पालन करना पड़ता है वह है अनिवार्य शिक्षा का कानून। सार्विक अनिवार्य साक्षरता का कानून हर बच्चे के जीवन मे वह पहला 'कानून' रहा है और अब भी है जिसके माध्यम से उसका न केवल एक अधिकार से बल्कि एक कर्त्तव्य से भी सामना होता है। यह अधिकार इसलिए है कि वह स्वयं अपनी भलाई के लिए सीखता है, और कर्त्तव्य इसलिए कि वह सबकी भलाई के लिए सीखता है। हर व्यक्ति को 'विज्ञान के चमत्कारों तथा संस्कृति की उपलब्धियों' में हिस्सा बंटाने का अधिकार है और इसके साथ ही उसका यह कर्त्तव्य भी है कि वह समाज की भलाई के लिए इन्हें समृद्ध बनाये!

क्रान्ति के बाद के दशक को "बच्चों का दशक" कहा जा सकता है, क्योंकि इसी दशक में सोवियत भूमि में बच्चों को शिक्षा देने का—साक्षर बच्चों की एक पूरी पीढ़ी तैयार करने का गम्भीरतापूर्वक प्रयास किया गया। देश ऐसे प्रौढ़ नही चाहता था जो अनगढ़ पदार्थ के बने हों। यह बात स्वतःसिद्ध सत्य के रूप में स्वीकार की जा चुकी थी कि साक्षरता बच्चे के जीवन में शीघ्रतम आरम्भ होनी चाहिए। स्कूल जाने की

आयु के बजाय स्कूल जाने से पहले की आयु पर और स्कूल की शिक्षा के बजाय स्कूल जाने के पहले की शिक्षा पर जोर दिया जाने लगा। मुक्त समाज बच्चे की शिक्षा की जिम्मेदारी पूरी तरह माता-पिता के हाथों में छोड़ देने का खतरा मोल लेने को तैयार नहीं था, जिन्होंने बच्चों को पढाने की विद्या का कोई प्रशिक्षण प्राप्त नही किया था। तीन वर्ष से कम आयु के बच्चों की देखभाल के लिए 'गुर्बनिया' (नर्सरी स्कूल) और सात वर्ष की आयु तक पहुँचने से पहले बच्चे को शिक्षा देने और थोडा-बहुत साक्षर बना देने के लिए किंडरगार्टेनों की पद्धति आरम्भ की गयी।

राज्य द्वारा आयोजित तथा नियन्त्रित संस्थाओं के माध्यम से स्कूल से पहले की शिक्षा पूर्णत: सोवियत सरकार की देन है। १९१७ से पहले बडे-बड़े शहरो मे केवल गिनती के कुछ किंडरगार्टेन थे और वे भी विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग के बच्चो के लिए थे। १९१४ मे रूस मे स्कूल से पहले की शिक्षा के केवल २७५ प्रतिष्ठान थे, जिनमे से १५० किंडरगार्टेन थे। इनमें ४,००० बच्चे पढते थे। अक्तूबर क्रान्ति के बाद और १९४० से पहले लगभग २४,००० किंडरगार्टेन बनाये गये इनमे ११,७८,००० बच्चे पढते थे। साक्षरता के स्तर को ऊँचा बनाये रखने और बच्चों को अधिक जल्द शिक्षा प्राप्त करने के लिए तैयार करने की ओर सरकार का ध्यान जैसे-जैसे बढता गया वैसे ही वैसे किंडरगार्टेनो की सख्या भी बढती गयी। १९६८ मे देश मे स्कूल से पहले की शिक्षा देने वाली लगभग एक लाख सरकारी कारखानो की तथा सामूहिक फार्मों की की संस्थाएँ थी जिनमें ९० लाख बच्चे पढ़ते थे और ५,०६,६००० अध्यापक तथा डाक्टर काम करते थे। १९७१ तक स्कूल से पहले की शिक्षा देने वाले प्रतिष्ठानो मे पढने वाले बच्चों की संख्या बढकर १ करोड़ ४५ लाख तक और उनकी देख-भाल करने वाले अध्यापकों की संख्या बढकर ६,००,००० तक पहुँच गयी थी। सोवियत सरकार से किंडरगार्टेनों को जन व्यापी संस्था बना दिया और उनके माध्यम से नयी पीढ़ी के लिए विकसित होकर साक्षर नागरिक बनने का मार्ग खोल दिया।

नवम्बर १९१७ में स्कूल मे पहले की शिक्षा के बारे में जो घोषणा की गयी थी, उसमें कहा गया था । कि बच्चों की सार्वजनिक शिक्षा उनके जीवन के प्रथम कुछ महीनों के दौरान ही आरम्भ कर दी जानी चाहिए। १९१८ में स्कूल से पहले की शिक्षा देने वाली सारी संस्थाएँ शिक्षा जन-कमिसार के आधीन कर दी गयी। सर्वश्रेष्ठ इमारतें, जिनमें कुछ राष्ट्रीकृत हवेलियाँ भी शामिल थीं, वाद्य-यन्त्र और फर्नीचर स्कूल से पहले की शिक्षा देने वाली संस्थाओं के हवाले कर दी गयीं। स्कूल से पहले की शिक्षा को बहुत महत्त्व दिया गया और तीन से सात वर्ष तक की आयु के बच्चों की आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए किंडरगार्टेनों की व्यापक व्यवस्था कायम की गयी। स्कूल से पहले की शिक्षा के बारे में कार्यक्रम की सफलता में अखिल-रूस कांग्रेसों ने बहुत योगदान किया। परन्तु वास्तविक श्रेय महिला बोल्शेविको को है।

स्कूल से पहले की सोवियत शिक्षा ने आने वाली पीढ़ियों के लिए निरक्षरता की समस्या को हल करने में आरम्भ से ही बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। 'गुर्वनिया' (नर्सरी) का उद्देश्य बच्चे को लिखना-पढना तथा हिसाब लगाना सीखने की शिक्षा देने से अधिक उसका विकास करना था। 'पोलचादकी' अर्थात् किंडरगार्टेन शुद्ध शिक्षा की अपेक्षा बच्चों की क्षमताओं के विकास की ओर अधिक ध्यान देते थे। वे बच्चों की शारीरिक तथा बौद्धिक क्षमताओं को विकसित करने की कोशिश करते थे और मानसिक दृष्टि से उसे इस योग्य बना देते थे कि वह शिक्षा के अमूर्त रूपो को ज्यादा बेहतर तरीके से समझ सके। स्कूल से पहले का प्रशिक्षण प्राप्त करके बच्चा लिखना-पढना और हिसाब लगाना सीखने के लिए तैयार हो जाता था। इससे बच्चे को पूर्ण साक्षरता और आगे की शिक्षा प्राप्त करने के लिए अच्छा आधार मिल जाता था। स्कूल से पहले की शिक्षा का संबंध स्कूल-व्यवस्था के साथ जुडा हुआ था और वह निरक्षरता को बढने से रोकने में बुनियादी भूमिका अदा करती थी और साथ ही निरक्षरता बढने का खतरा पैदा होते ही उसे वहीं कुचल देती थी।

यद्यपि स्कूल से पहले की शिक्षा एक प्रकार से शिक्षा की तैयारी होती

थी, परन्तु वह साक्षरता के द्वार खोल देती थी और बच्चों को साक्षरता का वास्तविक पाठ पढ़ना आरम्भ करने से पहले ही साक्षरता के कक्ष में पहुंचा देती थी।

सोवियत शिक्षा अलग-अलग कालावधियों में बंटी हुई है; नर्सरियों तथा किंडरगार्टेनों मे स्कूलों से पहले की शिक्षा ३ वर्ष की आयु से ७ वर्ष तक की आयु तक दी जाती है। सात वर्ष की आयु से हर बच्चा प्राथमिक स्कूल में शिक्षा प्राप्त करता है। उसके बाद ११ से १४ वर्ष की आयु तक आंशिक माध्यमिक शिक्षा की और १४ से १७ वर्ष की आयु तक पूर्ण माध्यमिक शिक्षा की बारी आती है। १७ वर्ष की आयु के बाद सभी वयस्कों के लिए समान पाठ्यक्रम उपलब्ध रहते हैं। १४ अगस्त १९३० को अनिवार्य प्राथमिक स्कूल की शिक्षा लागू की गयी और चार वर्ष तक स्कूल में पढना सभी के लिए अनिवार्य घोषित कर दिया गया। उसके बाद बच्चों के लिए सात वर्ष की स्कूल की पद्धति आरम्भ की गयी। १९५८ मे उसे बदलकर आठ वर्ष की शिक्षा कर दिया गया। १९७५ मे शहरों और देहातों दोनों ही मे सभी के लिए १० वर्ष की माध्यमिक शिक्षा में सक्रमण का काम पूरा करलिया गया। सोवियत संघ में अनिवार्य शिक्षा का अर्थ सचमुच अनिवार्य शिक्षा था। इसका अर्थ यह नहीं था कि कागज पर अनिवार्य और व्यवहार में वैकल्पिक। हर बच्चे को स्कूल जाना पड़ता था और अनिवार्य शिक्षा की अनिवार्य शिक्षा की अवधि पूरी करनी पड़ती थी। हर सोवियत बच्चे को अपनी सातवी वर्ष गाँठ के बाद सितम्बर मे स्कूल खुलने पर उसमें जाना पड़ता है। यह माता-पिता का कर्त्तव्य होता है कि वे उसका नाम लिखवायें और स्थानीय सोवियत के प्रधान का यह कर्त्तव्य होता है कि वह देखे कि बच्चा अनुपस्थित न रहे। हर बच्चा अनिवार्य रूप से स्कूल जाता है। कई दशाब्दियों और पीढ़ियों से एक भी बच्चे ने स्कूल की शिक्षा पाये बिना मजदूरों के जगत में प्रवेश नहीं किया है।

बच्चों को साक्षर बनाने का काम अपेक्षाकृत अधिक आसान था। बच्चों को साक्षर बनाने के लिए समस्या केवल इतनी थी कि पर्याप्त

संख्या मे स्कूलों, पाठ्य-पुस्तकों तथा अन्य शिक्षोपयोगी सामग्री की व्यवस्था कर दी जाये; परन्तु यह अपने आप मे एक बहुत बड़ा काम था स्कूल आने वाले बच्चों की संख्या धीरे-धीरे बढ़ती गयी और अन्त में सभी लाखों-करोड़ों सोवियत बच्चे स्कूल जाने लगे। स्कूलों की एक विस्तृत श्रृंखला स्थापित करनी पड़ी ताकि कोई बच्चा स्कूल मे जगह न मिलने के कारण शिक्षा से वंचित न रह जाये। सुदूरतम गांवों मे और हर उस जगह पर जहाँ आवश्यकता थी बच्चों के स्कूल स्थापित करने पड़े।

सरकार, औद्योगिक प्रतिष्ठानों, सामूहिक फार्मों तथा अन्य सार्वजनिक संस्थाओं ने निरक्षर बच्चो के लिए स्कूल स्थापित करने में सहायता दी। उन्होने स्कूल संगठित करने तथा उनको चलाने के लिए जगह दी, पैसा दिया, शिक्षोपयोगी सामग्री उपलब्ध की और अध्यापकों का प्रबन्ध किया। स्वैच्छिक चंदों के रूप में और बिना पैसा लिये पढ़ाने के रूप में वैयक्तिक सहायता से भी इस अभियान को बहुत सहारा मिला। विकलाग बच्चों के लिए भी स्कूल खोले गये। अँधों, बहरों तथा गूँगों को भी साक्षर बनाया गया।

निरक्षर बच्चों को पढ़ाने के लिए लाखों की संख्या में पाठ्य-पुस्तकें प्रकाशित की गयीं, और पुस्तकों के साथ ही निरक्षरता-विरोधी सैनिकों को अभियान चलाने के लिए कागज तथा पेंसिलें भी उपलब्ध की गयी। अन्य शिक्षोपयोगी सामग्री की भी व्यवस्था की गयी।

हर बस्ती के लिये उसके अपने स्कूल की व्यवस्था से हर बच्चे को स्कूल लाने मे बहुत सुविधा हुई। माता-पिता, सामाजिक कार्यकर्त्ताओं तथा स्थानीय सोवियतों के प्रधानों का निरन्तर यही प्रयास रहता था कि हर बच्चा स्कूल पहुँच जाये। यद्यपि आरम्भ मे स्कूल मे समुचित सामग्री नहीं थी, उनमे पर्याप्त फर्नीचर भी नही था, और उनके लिए काफी बड़ी इमारतें भी नही थी, फिर भी वे इतनी सुविधाएँ तो प्रदान करते ही थे कि बच्चा शिक्षा के मार्ग पर लग जाये। यह अभियान इतने अच्छे ढंग से संगठित किया गया था कि इस बात की कोई सँभावना ही न ही रह गयी थी कि सोवियत बच्चे बड़े होकर निरक्षर नागरिक बनें।

व्यापक निरक्षरता-विरोधी अभियान ने हर बच्चे को, वह कहीं भी रहता हो, अपनी परिधि में समेट लिया। पाठ्य-पुस्तकें और शिक्षोपयोगी सामग्री लेकर निरक्षरता-विरोधी सैनिक हर घर और हर गाँव में पहुँच गये। वे साइबेरिया के उत्तर में पामीर के दक्षिण में और इस विशाल भू-विस्तार के कोने-कोने में, पहुँच गये। वे एक चरागाह से दूसरी चरागाह तक खानाबदोश बच्चों के पीछे-पीछे घूमे, उन्होंने एस्कीमो बच्चों को पढ़ाया और साथ ही उन्होंने शहरों तथा कस्बों में रहने वाले बच्चों की ओर भी पूरा ध्यान दिया। निरक्षरता-विरोधी अभियान चलाने वालों ने सबसे अज्ञानी तथा सांस्कृतिक दृष्टि से सबसे पिछड़े हुए बच्चों तक को पढ़ाया। क्रांति के बाद से, बिना किसी अपवाद के हर सोवियत बच्चे को साक्षरता का पाठ पढ़ाया गया है और अब कोई भी बच्चा नहीं ऐसा है जिसने प्राथमिक शिक्षा प्राप्त न की हो।

### (३) स्त्रियाँ

सोवियत संघ में निरक्षरता मिटाने की समस्या मुख्यतः स्त्रियों की और विशेष रूप से विवाहित स्त्रियों की समस्या थी। यह केवल इन्हें साक्षर बनाने की नहीं बल्कि उन्हें मुक्त करने की समस्या थी। मध्य एशियाई जनतन्त्रों में निरक्षरता-विरोधी अभियान स्त्रियों की मुक्ति के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ था। रूस के इस भाग में स्त्रियों को बिल्कुल चल-संपत्ति समझा जाता था। उन्हें पैसा देकर खरीद लिया जाता था और उन्हें घर के अन्दर की एक कोठरी में, जिसे 'चाचवान' कहते थे काला 'परांजा' (बुरका) पहनकर रहना पड़ता था। उन्हें शिक्षा प्राप्त करने की इजाजत नहीं थी और अगर कोई लड़की किताब छूने तक का दुस्साहस करती थी तो उसे कुत्तों नुचवाकर मार दिया जाता था, या किसी खड्ड में फेंक दिया जाता था या नदी डुबो दिया जाता था।

इन मुस्लिम क्षेत्रों में स्त्रियों की शिक्षा विशेष रूप से कठिन समस्या थी। स्त्रियाँ अभी तक सामन्ती प्रभाव में और कबीलों की पराधीनता में

रहती थी। उन्हें न पढने का अधिकार था, न परदे से बाहर निकलने का और न सबके सामने कोई काम करने का। स्त्रियों के बीच निरक्षरता-विरोधी अभियान का मुख्य काम था, उन्हे और कुछ उदाहरणों में उनके माता-पिता तथा पति को शिक्षा प्राप्त करने के लिए मानसिक रूप से तैयार करना। धार्मिक शिक्षा का, विशेष रूप से इस्लाम की शिक्षा का, प्रभाव यह हुआ था कि स्त्रियाँ अपने को पुरुषों की तुलना मे हीन समझने लगी थी। उनके साथ ऐसा बर्ताव किया जाता था कि जैसे वे केवल घर का काम-काज करने के लिए बनाई गई हों। उनके लिए शिक्षा बेकार समझी जाती थी। निरक्षरता-विरोधी अभियान चलाने वालों को इन स्त्रियों को, विशेष रूप से विवाहित स्त्रियो को, यह समझाना पड़ा कि उन्हें पुरुषों के बराबर अधिकार प्राप्त है। और समाजवादी प्रणाली मे वे भी उतनी ही महत्वपूर्ण तथा उपयोगी नागरिक होंगी जितने कि उनके पति। उन्हे यह बताया गया कि साक्षरता से उन्हे क्या-क्या व्यावहारिक तथा भौतिक लाभ होंगे। स्त्रियों मे इस बात का साहस पैदा करना पड़ा कि वे अपनी दशा के विरुद्ध विद्रोह कर सकें। पराजा उतार फेंकने, चाचवान से बाहर निकलने, सारी दुनियाँ को अपना मुँह दिखाने और ऐसे मर्दो से बात करने के लिए, जो उनके पति या निकटतम संबंधी नही थे, बहुत हिम्मत की जरूरत थी। और फिर इन सब बातों में जोखिम भी बहुत था। पुरुषों की दासता के चंगुल से बाहर निकलकर शिक्षा प्राप्त करने के अपराध मे स्त्रियों को उनके पतियों ने, माता-पिता ने तथा धार्मिक उन्मादियो ने घोर यातनाएँ भी दी। सोवियत सरकार तथा निरक्षरता-विरोधी अभियान चलाने वालों को औरतों को यह समझना पडा कि उन्हे स्वतन्त्र होने का कानूनी अधिकार है साथ ही उन्हे सुरक्षा का आश्वासन भी देना पड़ा।

प्रचलित जीवन-पद्धति को देखते हुए स्त्रियो के बीच निरक्षरता के विरुद्ध लड़ने के लिए निम्नलिखित उपाय किये गये :

१. कुछ प्रथाएँ (जैसे पराजा पहनना, पैसे देकर पत्नियों को खरीदना, आदि), जो नौजवान औरतों की मुक्ति में बाधक थी, खत्म कर दी गयी।

२. स्थानीय जातियों की लड़कियों के लिए विशेष स्कूल स्थापित किये गये। यहाँ उनको घरेलू वातावरण मिला और उनमें वह आत्म-विश्वास पैदा हुआ जिसकी बहुत जरूरत थी।

३. स्त्रियों के स्कूलों के अतिरिक्त तरुण कम्युनिस्ट लीग के विशेष महिला संगठन स्थापित किये गये।

४. स्कूलों में पढ़ना-लिखना, और थोड़ा-बहुत हिसाब लगाना सिखाने के अलावा विशेष आकर्षण के रूप में कशीदाकारी, कालीन बुनना और सिलाई भी सिखाई जाती थी।

५. कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों के लिए यह अनिवार्य कर दिया गया कि वे अपनी बेटियों को स्कूल भेजें और इस प्रकार उन दूसरे मेहनतकश लोगों के लिए एक आदर्श प्रस्तुत करें जिन पर अभी तक मुल्लाओं और पादरियों का प्रभाव था और जो अपनी बेटियों को स्कूल भेजने का साहस नहीं कर सकते थे।

६. स्कूलों में आम लोगों की दिलचस्पी बढ़ाने के लिए महिला संगठनों की प्रतिनिधियों को भी स्कूलों की कौंसिल में रखा गया।

७. स्त्रियों की काम करने की और जीवन की परिस्थितियों में सुधार करने के लिए एक आयोग की स्थापना की गयी और स्त्रियों की शिक्षा की समस्याओं का समाधान करने के लिए निरीक्षक नियुक्त किये गये।

८. युवतियों के प्रतिनिधियों की सभाएँ, कांग्रेसें तथा सम्मेलन संगठित किये गये। इन्होंने शैक्षिक गतिविधियों के मंचों का काम किया।

९. पतियों में जागृति पैदा करने के लिए, जो आम तौर पर इस बात का विरोध करते थे कि उनकी पत्नियों को शिक्षा दी जाये, उनके वैचारिक तथा राजनीतिक स्तर को ऊँचा उठाने के लिए कदम उठाये गये।

१०. स्त्रियों के लिए विशेष बहु-प्रयोजन क्लब तथा 'लाल कोने' संगठित किये गये।

११. स्त्रियों को सामाजिक काम में, विशेष निरक्षरता-विरोधी स्कूलों

में, क्लबों तथा अन्य सांस्कृतिक संगठनों की गतिविधिओं में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया गया।

१२. लड़कियों के लिए ऐसे स्कूल खोले गये जिनमें उनके रहने का भी प्रबंध था।

१३. स्त्रियों को सामंती तथा कबीलों के पूर्वाग्रहों से मुक्त कराने और उन्हें स्कूलों में लाने के लिए सार्वजनिक शिक्षा अधिकारियों, अध्यापकों तथा तरुण कम्युनिस्ट लीग ने उन्हें समझाने-बुझाने का काम किया।

१४. नये कानून के अनुसार, स्थानीय जातियों की लड़कियों के मामले में अनिवार्य शिक्षा का विरोध करना अपराध घोषित कर दिया गया।

१५. छात्राओं के लिए तरह-तरह के प्रोत्साहनों की व्यवस्था की गयी।

१६. सहशिक्षा की व्यवस्था लागू की गयी।

इन पिछड़े हुए जनतन्त्रों में स्त्रियों तक पहुँचना निरक्षरता-विरोधी महिला कार्यकर्त्ताओं के लिए बहुत कठिन काम था, और उन्हें इन औरतों की कोठरियों तक पहुँचने के लिए 'परांजा' तक पहनना पड़ा। शुरू-शुरू में तो यह काम विशेष "महिला खंडों" की निगरानी में अलग-अलग दलों के रूप में सगठित स्त्रियों को लेकर यह काम किया गया। हर स्त्री की ओर विशेष ध्यान दिया जाता था और धीरे-धीरे करके उन्हे नयी संस्कृति का समर्थक बना लिया गया।

स्त्रियों को केवल साक्षरता के लिए स्कूल लाना संभव नहीं था। स्त्रियों के क्लब और खेतों मे काम करने वाली स्त्रियो के क्लब जैसे शैक्षिक संगठन स्थापित किये गये। इन क्लबों के लिए सबसे अच्छी इमारतें दी गयी। अनिवार्य रूप से हर क्लब में पुस्तकालय, वाचनालय और स्कूल होता था और यहां तकनीकी विषयों के पाठ्यक्रमों की शिक्षा और स्त्रियों के लिए कानूनी परामर्श के तीन महीने के पाठ्यक्रम भी चलाये जाते थे। ये क्लब असाधारण सामुदायिक केंद्र थे जिनमें न केवल स्कूल तथा पुस्तकालय बल्कि सिनेमाघर तथा व्याख्यान, भवन, गैर-पेशेवर कला-मंडलों के लिए अभ्यास कक्ष, दवाखाने, उत्पादन विभाग, कानूनी परामर्श कार्या

लय और नाना प्रकार के अन्य अध्ययन पाठ्यक्रमों की व्यवस्था रहती थी। वहाँ नर्सों के प्रशिक्षण की, किंडरगार्टेनों में क म करने के लिए जूनियर अध्यापको के प्रशिक्षण की, तथा अन्य कामो के प्रशिक्षण की भी व्यवस्था रहती थी।

क्लब के औद्योगिक खंड में कपड़ा तथा कालीन बुनने के विभाग, जच्चा-बच्चा की देखभाल का विभाग, स्त्रियों तथा बच्चो के परामर्श-कक्ष, एक किंडरगार्टेन, एक दवा की दूकान और एक क्लीनिक होती थी। इसी प्रकार के क्लब दूसरी बस्तियों तथा गाँवों मे भी खोले गये। स्त्रियों के लिए लाल कोने (विश्राम तथा मनोरंजन के स्थान) भी संगठित किये गये।

स्त्रियों के क्लबों में स्त्रियों को आकर्षित करने के लिए यथासंभव अधिकतम व्यवस्था की जाती थी। उदाहरण के लिए तुर्कमेन जनतन्त्र के अश्काबाद शहर मे खेतों मे काम करने वाली स्त्रियों का केन्द्रीय क्लब एक बहुत ही सुन्दर लम्बी-चौड़ी हवेली मे स्थित था जिसमें फलो का एक बाग भी था। इस हवेली मे एक होटल, बच्चों के कमरो, डाक्टरी तथा कानूनी परामर्श, निरक्षरता-विरोधी स्कूल, पुस्तकालय, कपडो की मरम्मत की दुकान, स्नानागार आदि सभी कुछ था। अपने गांव से अश्काबाद आने वाली हर औरत खेतों मे काम करने वाली स्त्रियों के इस केन्द्रीय क्लब मे कोई पैसा लिये बिना पंद्रह दिन तक रह सकती थी।

स्त्रियों के क्लबो तथा लाल कोनो की बदौलत स्त्रियों को निरक्षरता के विरुद्ध व्यापक अभियान चलाना संभव हो गया। इन क्लबों के माध्यम से बहुत बड़े पैमाने पर शिक्षा का काम किया गया। इन केन्द्रों में समझाने-बुझाने का तथा प्रचार का जो काम किया जाता था उससे इन औरतो मे जानकारी प्राप्त करने और जहालत और गुलामी की उस जिन्दगी से, जो वे अब तक बिताती आयी थीं, छुटकारा पाने की लालसा पैदा होती थी। जो भी औरत पढ़ना-लिखना सीख लेती थी वह अपने रिश्तेदारो, अपनी सहेलियों और गांव की दूसरी औरतों के बीच सबसे अच्छी प्रचारक बन जाती थी।

स्त्रियों के क्लबों की लोकप्रियता बड़ी तेजी से बढ़ती रही। यहाँ औरतें न केवल लिखना-पढना सीखती थी, बल्कि कुछ कौशल तथा सामूहिक रूप से काम करना भी सीखती थी ये क्लब उनके लिए स्वतंत्रता के नये जीवन का पहला कदम थे।

ज्ञानोपार्जन को काम के साथ जोड़ देने के कारण गृहणियों के लिए दिन के समय शिक्षा प्राप्त करना सभव हो गया। वे पढ़ने के लिए घर छोडकर आने के कारण अपना कोई हर्ज किये विना ही अपना काम भी करती रह सकती थी और साक्षरता की कक्षाओं मे भी शरीक हो सकती थी। इस सँयोजन के कारण उनकी रुचि भी वनी रहती थी और शिक्षा की व्यावहारिक उपयोगिता भी उनकी समझ मे आ जाती थी।

अविवाहित लड़कियों की अपेक्षा बच्चो वाली विवाहित युवतियों को स्कूल मे लाने की समस्या अधिक कठिन थी। धार्मिक तथा अपने-अपने क़बीलो के पूर्वाग्रहों के अलावा इन स्त्रियों के सामने साक्षरता की कक्षाओं मे आने के लिए खाली समय निकालने की व्यावहारिक कठिनाई भी थी। लेनिन की पत्नी तथा साथी नाद्येज्दा क्रुप्सकाया ने, जो निरक्षरता-विरोधी अभियान की प्रेरक शक्ति थी, हर शिक्षा संस्था की इमारत मे ही बच्चों की देखभाल करने के केन्द्र खुलवाकर विवाहित स्त्रियों की इस समस्या को हल कर दिया ताकि उन्हे साक्षरता की कक्षाओं मे बैठने के लिए खाली समय मिल सके। स्त्रियो अपने बच्चो को प्रशिक्षित तथा अनुभवी कार्यकर्त्ताओ के पास छोड़कर विना किसी चिन्ता के शिक्षा प्राप्त कर सकती थी और अन्य उपयोगी काम कर सकती थीं। यही नर्सरियो तथा किंडरगार्टेनो की विस्तृत शृंखला की शुरुआत थी जो आगे चलकर निरक्षरता-विरोधी अभियान में बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध हुए।

चार से सात वर्ष तक के बच्चो के लिए किंडरगार्टेन शिक्षा जन-कमिसारियट के अधिकार-क्षेत्र मे कर दिये गए। "१९२० और १९३० के बाद वाले दशको में नर्सरियो तथा किंडरगार्टेनों की शृंखला के तेजी से बढते जाने के बारे मे सोवियत अधिकारियों ने यह मत निर्धारित किया कि यदि सोवियत नारी को 'सुखी मातृत्व' के साथ ही 'समाजवाद

के निर्माण में भी सक्रिय रूप से भाग लेना है' तो ये नितांत आवश्यक है (१६३६ के सोवियत संविधान की धारा १२२)। लेनिन के शब्दों में, इस प्रकार की संस्थाऐं स्त्रियों को उस तुच्छ घरेलू काम-काज और उस निरन्तर दरिद्रता से छुटकारा दिलाने का काम करती हैं जो उसे कुचल देती हैं, उसका दम घोट देती हैं, उसके विकास को रोक देती हैं और उसे हीन बना देती हैं (नीना एन० सोरोचांको का सोवियत संघ में स्कूल से पहले की शिक्षा नामक निबंध)।

चूंकि स्त्रियों का शैक्षिक तथा सांस्कृतिक विकास उनकी सामाजिक मुक्ति पर निर्भर था, इसलिए सहशिक्षा को सांस्कृतिक क्रान्ति का एक महत्वपूर्ण अंग घोषित किया गया। सहशिक्षा को नारी को मुक्त कराने और उसे पुरुष के बराबर स्थान दिलाने के एक उपाय के रूप मे इस्तेमाल किया गया। क्रान्ति से पहले के रूस मे स्त्री को पुरुष की अपेक्षा तुच्छ समझा जाता था और वह हीन नागरिक का जीवन व्यतीत करती थी, तथा अपने देश के सामाजिक-आर्थिक अथवा राजनीतिक जीवन में कोई भाग नही लेती थी। नयी समाज-व्यवस्था इसे बर्दाश्त नही कर सकती थी। सहशिक्षा स्कूल का प्रचलन पुरुषों के साथ स्त्री की बराबरी की दिशा मे एक कदम का द्योतक था और स्त्रियों के इस अधिकार की स्वीकृति था कि वह देश की सम्पदा तथा ज्ञान के भंडार मे पुरुषों के साथ बराबर की साझेदार है। निरक्षरता को मिटाने की मुहिम में पुरुषों और स्त्रियों के बीच कोई भेदभाव नही बरता गया।

मई १६१८ के अध्यादेश से सभी स्कूलों में सहशिक्षा लागू कर दी गयी। इससे लोगो को व्यवहार में पुरुषो तथा स्त्रियों की बराबरी को देखने का, स्त्रियों तथा पुरुषों की समानता के सिद्धान्त का आदी होने का और स्त्रियों तथा पुरुषों के बीच सहयोग तथा साथियों जैसा भाव रखने के बीच सहयोग तथा विकसित करने का अवसर मिला।

सहशिक्षा का फौरन असर पडा। उससे स्त्रियों का बौद्धिक तथा सांस्कृतिक स्तर ऊँचा हुआ और इसके अलावा इन बातो मे योग मिला:

(क) स्त्रियों के सामाजिक पद में उन्नति, जो देश की आवादी का आधा भाग थी;

(ख) स्त्रियों को सभी बातों में पुरुषों के बराबर स्थान दिया जाना, सिद्धान्त में भी और वास्तव में भी;

(ग) स्त्रियों के मानसिक अथवा बौद्धिक दृष्टि से हीन होने होने की भ्रान्त धारण का खंडन;

(घ) सभी उम्रों के लड़कों और लड़कियों के बीच साथियों जैसे सम्बन्धों की स्थापना; और

(ङ) पुरुषों के साथ मिल समाजवादी निर्माण में हाथ बटाने की अपनी क्षमता में स्त्रियों के आत्म-विश्वास का बढ़ना।

ऊपर बतायी गयी इन तमाम बातों की वजह से स्त्रियों के मन से हीनता का भाव दूर हो गया, जिसके अधीन वह सदियों से काम करती आयी थी और जिसकी वजह से उसने पढ़ा-लिखा या विद्वान बनने की अपनी तथाकथित अक्षमता को सच्चा और वास्तविक मान लिया था। इस भावना के मिट जाने से उसमें शिक्षा तक के क्षेत्र में पुरुषों के साथ प्रतिस्पर्द्धा का नया आत्म-विश्वास उत्पन्न हुआ। सहशिक्षा ने नारी के मन में यह भावना कूट-कूट कर भर दी कि उसे दूसरों से आगे बढ़ना है, और शीघ्र ही उसने अपनी निरक्षरता दूर कर ली, उच्चतर शिक्षा प्राप्त की और विद्या के हर क्षेत्र में विशेषज्ञ बनने लगी।

नवजीवन के सुप्रभात का अपना अलग ही आकर्षण था। ज्ञान और खुली हवा का आकर्षण अधिकाधिक संख्या में स्त्रियों को लिखना-पढ़ना सिखानेवाले स्कूलों की टूटी-फूटी झोंपड़ियों तक खींचकर लाने लगा। समाजवादी संस्कृति की स्वतन्त्रता इतनी आकर्षक थी कि [illegible] पुरानी दीवारें, कबीलों के तथा धार्मिक पूर्वाग्रहों की ऊंची दीवारें और 'पर्दे' का मोटा परदा भी औरतों को निरक्षरता-विरोधी केन्द्रों में जाने और नयी संस्कृति का निर्माण करने में भाग लेने से रोक नहीं सका। हर साल इनकी संख्या लगातार बढ़ती ही रही।

सोवियत नारी ने सिद्ध कर दिया कि वह जितनी भीरु हो सकती है, उतनी ही साहसी भी हो सकती है। आवश्यकता केवल उचित परिवेश की है। ज़ारशाही शासनकाल में वह बांदियों की तरह रही और गुलामी को बर्दाश्त करती रही; लेकिन एक बार चारों ओर की हवा बदलते ही उसने साक्षरता के विरुद्ध पूर्वाग्रहों को मनुष्य से भी जल्दी और ज्यादा आत्म-विश्वास के साथ त्याग दिया। उसे न केवल अक्षर और गिनतियां सीखनी थीं बल्कि अपने पूरे जीवन को एक नये सांचे में ढालना था और अपनी प्रवृत्तियों को नयी सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था के अनुसार विकसित करना था। उसने आगे बढ़कर बहुत जल्दी ही अपनी निरक्षरता से छुटकारा पा लिया, उच्चतर शिक्षा प्राप्त की और समाजवादी निर्माण के काम में सक्रिय रूप से भाग लेने लगी।

## (४) प्रौढ़

निरक्षरता के विरुद्ध सोवियत युद्ध का सबसे महत्वपूर्ण पहलू वह था जिसका सम्बन्ध प्रौढ़ों से था। साम्यवाद के निर्माण में जिस जन-संख्या को भाग लेना था वह सारी की सारी निरक्षर थी। इतनी विशाल जनसख्या को शिक्षा देने का काम बहुत बड़ा था, रास्ते में बाधाएँ अनेक थीं, और समय का भी बहुत बुनियादी महत्व था। सामाजिक तथा मान-सिक बाधाओं के अतिरिक्त हर चीज़ की कमी भी थी—अध्यापक, पुस्तकें, पेंसिलें, कागज़, जगह आदि।

कुछ लोग परिवर्तन के विरोधी थे और साक्षरता को निरर्थक समझ कर वे शिक्षा प्राप्त करने का विरोध करते थे। जो सबसे अधिक पिछड़े हुए थे वे सबसे अधिक विरोध करते थे।

बताया जाता है कि मध्य एशिया के एक ३५-वर्षीय गडरिये ने निर-क्षरता-विरोधी कार्यकर्त्ताओं से कहा, "मैं क्यों पढ़ूँ। मेरे बाप बिना पढ़े ७५ वर्ष तक जिंदा रहे और मेरे दादा भी अनपढ़ थे, मैं भी बिना पढ़े अपना काम चला लूंगा।" और उसकी दादी ने यह कहकर विरोध किया :

"स्कूल से किसी का कोई भला होने वाला नहीं। आज वे अक्षर पढ़ना सीखेंगी, कल वे परांजा उतार फेंकेंगी, और फिर वे बिल्कुल हाथ से निकल जायेंगी और कुरान पर भी ईमान लाना छोड़ देंगी।" ये दोनों अपवाद नही थे। इनके जैसे बहुत-से लोग थे।

तमाम बातों के बावजूद साक्षरता के विरुद्ध उनके पूर्वाग्रहों की उपेक्षा नही की जा सकती थी और उनका सामना बड़ी सूझ-बूझ के साथ करना जरूरी था। लोगों में और अधिक जाग्रति पैदा करके इन पूर्वाग्रहों को दूर किया गया उन्हें बताया गया कि साक्षरता से किस उनकी उत्पादनशीलता बढेगी और उन्हें भौतिक लाभ होंगे। निरक्षरता-विरोधी कार्यकर्त्ताओं ने समझाने-बुझाने का रास्ता अपनाया और वे निरक्षर जन-साधारण को स्कूलो मे पढने के लिए लाने मे सफल हुए।

कुछ दिन शिक्षा प्राप्त कर लेने के बाद छात्र मजदूरो, किसानों और स्त्रियों की सभाओं मे दूसरे निरक्षरों को अपने ज्ञानवर्धक अनुभव के बारे मे बताते थे। इस तरह की बातचीत का लाभप्रद प्रभाव पड़ा, विशेष रूप से बड़ी उम्र मे पढने जाने का संकोच दूर करने में। हालांकि निरक्षरता के उन्मूलन का कानून पचास वर्ष तक की आयु के लोगो पर लागू होता था पर यदि उससे भी बड़ी उम्र के मर्द या औरतें पढ़ना-लिखना सीखने की इच्छा प्रकट करते थे तो उन्हें प्रोत्साहित किया जाता था और उनका उदाहरण उन लोगों के सामने एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत किया जाता था जो अपनी बड़ी उम्र के कारण वर्णमाला के अक्षर सीखने मे संकोच अनुभव करते थे। इससे प्रौढ लोगों के बीच अपने जीवन में एक नया अध्याय आरम्भ करने के बारे मे जो संकोच था उसे दूर करने में सहायता मिली।

निरक्षरता-विरोधी अभियान ने निरक्षर लोगों के मन में यह बात बिठा देने की भरपूर कोशिश की कि शिक्षा स्वयं उनकी भलाई के लिए है। वर्कशापों और क्लबों मे छात्रों की उपलब्धियों के बारे मे कुछ स्कूलों में प्रदर्शनियां संगठित की गयी। निरक्षरता-विरोधी कार्यकर्त्ताओं की सफलताओं की खबरें छापकर और निरक्षरता-विरोधी कार्यकर्ताओं के

तथा शिक्षा के विरोधियों का भंडाफोड़ करके पत्र-पत्रिकाओं ने अभियान को लोकप्रिय बनाया। थिएटरों और सिनेमाघरों में नाटक या फिल्म आरम्भ होने से पहले निरक्षरता के उन्मूलन के क्षेत्र में हुई प्रगति का ब्यौरा प्रस्तुत किया जाता था।

लेखकों और कलाकारों ने भी प्रचार में सहायता दी। निरक्षरता-विरोधी अभियान को अनेक रेखाचित्रों, कहानियों, कविताओं, पोस्टरों तथा तस्वीरों का विषय बनाया गया। इसी विषय पर आधारित नाटक भी मंच पर प्रस्तुत किए गये, अपनी निरक्षरता के कारण लोगों को जिन विपदाओं तथा मुसीबतों का सामना करना पड़ा उनका चित्रण किया गया और लोगों से निरक्षरता मिटा देने की अपील की गयी।

रेडियो ने भी निरक्षरता-विरोधी प्रचार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

*महान लेखक मैक्सिम गोर्की की पहलक़दमी पर प्रौढ़ निरक्षरों के* लिए चीजें पढ़कर सुनाने का आयोजन किया गया। इन आयोजनों में श्रोताओं को कहानियां तथा उपन्यास जोर-जोर से पढ़कर सुनाये जाते थे। इस प्रकार चीजें पढ़कर सुनाने का कार्यक्रमों का आयोजन स्कूलों, पुस्तकालयों, वाचनालयों, चायखानों और अन्य स्थानों में किया जाता था जहां लोग जमा होते थे। इनका श्रोताओं पर बहुत प्रभाव पड़ा और ये निरक्षर लोगों में पढ़ने की रुचि पैदा करने और उन्हें निरक्षरता-विरोधी स्कूलों में लाने का अत्यन्त सफल उपाय सिद्ध हुए।

प्रौढ़ों के लिए विभिन्न जातियों की भाषाओं में विशेष प्राथमिक *पुस्तकें प्रकाशित की गयी और दोलोई नेग्रामोतनोस्त* (निरक्षरता का नाश हो!) नामक पत्रिका प्रकाशित की गयी। लोगों को उन नारों के अन्तर्गत *काम करने की प्रेरणा दी गयी* : "निरक्षरता को मिटा देने का भरपूर प्रयत्न करो", "निरक्षरता को मिटाकर अर्थतन्त्र का विस्तार तथा सुधार करो", "किसानों, याद रखो तुम्हें पढ़ना-लिखना सीखना है और ग्राम सोवियतों में अपना स्थान ग्रहण करना है"," निरक्षरता-विरोधी अभियान में सरकार की मदद करो", इत्यादि।

बच्चों को पढ़ाने लिए जो तरीके इस्तेमाल किये जाते थे उन्हें यन्त्र-वत् ज्यों का त्यों प्रौढ़ों को पढ़ाने के लिए नहीं अपनाया जा सकता था। बच्चों को पाठ्य-पुस्तकें स्पष्टतः प्रौढों को पढ़ाने के लिए उपयोगी सिद्ध नही हो सकती थी। बच्चों की पाठ्य-पुस्तकों से भिन्न विषय-वस्तु चुनकर और इस सामग्री को दूसरे तरीके से प्रस्तुत करके विशेष पाठ्य-पुस्तकें लिखी गयी और बहुत बड़ी संख्या में प्रकाशित करके जन-व्यापी पैमाने पर वितरित की गयी। इन पाठ्य-पुस्तकों में ऐसी सामग्री होती थी जो प्रौढ लोगों के विचारों को आकर्षित कर सके और उनके मन में तेजी से होते हुए उन राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक परिवर्तनों के प्रति रुचि पैदा कर सके जिन्हें लोग क्रान्ति की सफलता के बाद मे अनुभव कर रहे थे। १९१९ मे "निरक्षरता का नाश हो" के नाम से जो पहली पाठ्य-पुस्तक प्रकाशित की गयी थी वह इन शब्दों से आरम्भ होती थी : "हम गुलाम नही हैं। हमने गुलामी की जंजीरें तोड़ दी है। हमारी झोंपड़ियों मे शान्ति व्याप्त रहे।"

पत्रिकाओं तथा पुस्तकों में विशेष लेख प्रकाशित किये जाते थे। उनकी विशेषता यह होती थी कि वे बड़े अक्षरों से छापे थे, लेख छोटे होते थे और उनकी विषय-वस्तु विशेष प्रकार की होती थी। उनका उद्देश्य नये शब्दों का अर्थ समझाना, शिक्षा में पाठक की रुचि बनाए रखना और उसे नयी संस्कृति सिखाना होता था। अखबारों मे उन लोगों के लिए विशेष खंड होते थे जो पढ़ना सीख रहे थे। उनमे बड़े-बड़े अक्षर मे छोटे-छोटे लेख होते थे, और शहरों देहातों तथा विदेशों के जीवन का वर्णन किया जाता था। उनमें कहानियाँ तथा कविताएँ भी होती थीं, जिनके साथ कठिन शब्दों के अर्थ भी समझाये जाते थे। अखबारों में ऐसी सामग्री भी प्रकाशित की जाती थी जिसे अध्यापक पूरक प्रशिक्षण सामग्री के रूप मे इस्तेमाल कर सकते थे। शिक्षोपयोगी उपकरणों के रूप में ऐसे रंग-विरंगे पोस्टर भी इस्तेमाल किये जाते थे जिनमें व्याकरण के प्राथमिक नियम, गणित और प्राकृतिक विज्ञान की बुनियादी बातें समझाई जाती थी। जीवन के अधिक व्यापक अनुभव और मानसिक परि-

पक्वता के कारण प्रौढ़ पाठक इस सामग्री को ज्यादा आसानी से समझ लेते थे, विशेष रूप से जब उसका सम्बन्ध स्वयं उनके जीवन तथा परिवेश से होता था।

प्रौढ लोगों की निरक्षरता-विरोधी शिक्षा सभी कस्बों, बस्तियों, पुरवों तथा गांवों मे इस उद्देश्य से स्थापित किये गये स्कूलों में तीन-चार महीने के विशेष पाठ्यक्रमों के माध्यम से पूरी की जाती थी। इन पाठ्यक्रमो छात्र पढने, लिखने और गिनती गिनने के बुनियादी सिद्धान्त सीख लेते थे। बाद में, एक दस महीने का पाठ्यक्रम होता था जिसके दौरान प्राथमिक स्कूलो की पहले दो वर्षों की पढाई पूरी की जाती थी। अर्ध-साक्षरों के लिए जो पाठ्यक्रम होता था। वह स्कूलों की चार वर्ष की पढ़ाई के बराबर होता था।

साक्षरता प्रदान करने के परम्परागत बिखरे हुए तरीके के बजाय गहन शिक्षा का तरीका अपनाया गया सप्ताह मे कई दिन चार-चार घंटे *की लम्बी अवधि तक शिक्षा दी जाती थी। इससे सीखने वाले बडी तेज़ी* से प्रगति करने मे सफल हुए और अपनी इस नई उपलब्धि से उनके मन मे अधिक ज्ञान प्राप्त करने और विभिन्न कालावधियो मे विभाजित साक्षरता पाठ्यक्रम को पूरा करने की इच्छा उत्पन्न हुई।

परिस्थिति के अनुसार अध्यापन के कई रूप अपनाये गये: व्यक्तिगत, सामूहिक (४-५ व्यक्ति) और बडी कक्षाओं मे अध्ययन। शिक्षा की व्यक्तिगत प्रणाली के अन्तर्गत एक साक्षर व्यक्ति एक निरक्षर को पढाता था। सामूहिक प्रणाली के अन्तर्गत उस समूह के साथ सम्बद्ध सांस्कृतिक अभियान मे भाग लेने वाला कोई व्यक्ति छात्रों को पढाता था। बडी कक्षाओं मे *अध्ययन की प्रणाली के अन्तर्गत, जो सबसे व्यापक रूप से* अपनायी गयी, एक या दो अध्यापक छात्रों को कक्षा में पढाते थे। कक्षा में अध्ययन की प्रणाली के अन्तर्गत पढ़ाने का काम एक भाषा बोलने वाले लोगों को एक ही कक्षा में रखकर मातृभाषा के माध्यम से किया जाता था। उदाहरण के लिए, उजबेक लोगों को एक कक्षा मे रखकर उजबेक

भाषा में शिक्षा दी जाती थी, ताजिको को दूसरी कक्षा में रखकर ताजिक में शिक्षा दी जाती थी।

प्रौढ़ों के लिए बुनियादी निरक्षरता-विरोधी पाठ्यक्रम आमतौर पर मातृभाषा में लिखना और पढना, सीखने, गणित के चार बुनियादी नियमों और देश के इतिहास, भूगोल, निवासियों तथा अर्थतन्त्र के बारे में बुनियादी सामान्य शिक्षा प्राप्त करने तक सीमित होता था। प्रौढ छात्रों को उनकी शिक्षा के दौरान राज्यसत्ता की नीतियों की मूलभूत प्रवृत्तियों और सोवियतों संघ तथा विश्व की महत्वपूर्ण घटनाओं के बारे में भी जानकारी प्रदान की जाती थी।

प्रौढों के बीच निरक्षरता-विरोधी अभियान अनोखा सोवियत प्रयोग था। वह अपने ढंग का पहला प्रयोग था। प्रौढों के लिए भी केवल लिखना-पढना और थोड़ा-बहुत हिसाब लगाना सिखा देने को ही पूर्ण साक्षरता नहीं समझा जाता था। यह तो शैक्षिक जीवन में केवल उनका प्रवेश मात्र था। उन्हें और आगे पढ़ने का प्रोत्साहन देने के लिए हर सम्भव कोशिश की गयी। प्रौढ़ों के लिए विशेष स्कूलों की व्यवस्था की गयी। उनके लिए विशेष पाठ्यक्रम तैयार किये गये, और जहाँ कोई स्कूल नहीं था या अन्य किन्ही कारणों से उनके लिए स्वयं स्कूल आना सम्भव नही था, शिक्षा पत्र-व्यवहार के माध्यम से दी जाती थी। पत्र-व्यवहार स्कूल का कोई अध्यापक नियमित अवधि के बाद पत्र-व्यवहार छात्र के पास जाता था और आवश्यकता होने पर उसे व्यक्तिगत रूप से सहायता देता था। पत्र-व्यवहार के माध्यम से शिक्षा को बहुत महत्व दिया जाता था। प्रौढ़ लोगो के लिए कई प्रादेशिक पत्र-व्यवहार स्कूल खोले गये और छात्रों को पाठ्य-पुस्तकें, नोटबुकें, कलम, पेंसिलें, आदि उसी प्रकार दी गयी जिस प्रकार माध्यमिक स्कूलों के आम छात्रों को दी जाती थी। प्रौढ शिक्षा विभाग ने पाठ्यचर्या तैयार की और पत्र-व्यवहार शिक्षा की प्रणालियाँ निर्धारित की। इस योजना को व्यावहारिक रूप देने के लिए अध्ययन परामर्श केन्द्र स्थापिक किये गये।

प्रौढों को शिक्षा देने के लिए विशेष प्रकार की पद्धतियों की आव-

श्यकता थी। नये अध्यापकों की उस विशाल संख्या को, जिन्होंने प्रौढ लोगो को पढ़ाने का कोई विशेष प्रशिक्षण प्राप्त नही किया था, विशेष मार्गदर्शन की आवश्यकता थी। यह मार्गदर्शन की आवश्यकता थी। यह मार्गदर्शन अलग-अलग जनतन्त्रों के शिक्षा मन्त्रालयों की ओर से सारे देश में प्रदान किया गया। हर मन्त्रालय ने अपनी शिक्षण-पद्धति परिषद की स्थापना की जिसने शिक्षा-सम्बन्धी योजनाएँ, कार्यक्रम तथा निर्देश तैयार किये तथा उनका वितरण किया। इन्होने नयी पाठ्य-पुस्तकें तथा शिक्षोपयोगी उपयोगी उपकरण भी तैयार किये। "सांस्कृतिक अभियान" के प्रत्येक मुख्य कार्यालय में स्थापित प्रादेशिक शिक्षण-पद्धति परिषदों की ओर से अतिरिक्त मार्गदर्शन प्रदान किया गया।

सामान्य शिक्षा के स्कूल निरक्षरता-विरोधी कार्यकर्त्ताओं के लिए शिक्षण-पद्धति सम्बन्धी मार्गदर्शन के प्रमुख केन्द्रों के रूप में काम किया। इन केन्द्रों मे सभी आधार-सामग्री और प्रौढ शिक्षा में भाग लेने वालों के अनुभवों का पूरा ब्यौरा रखा जाता था। अनुभवों के आदान-प्रदान के लिए सम्मेलनों को आयोजन किया जाता था, आपस मे परामर्श होता था, और स्कूलो मे प्रौढ़ शिक्षा के अल्पकालीन (१०-२० दिन के) रिफ्रेशर पाठ्यक्रमों का भी आयोजन किया था।

अध्यापन-पद्धति का विशेष ज्ञान रखने वाले हर व्यक्ति को सांस्कृतिक अभियान में भाग लेने वाले तीन या चार ऐसे लोगों की जिम्मेदारी सौंप दी जाती थी, जो प्रशिक्षित अध्यापक नहीं होते थे। वह उन्हें सैद्धांतिक शिक्षा और व्यावहारिक प्रदर्शन दोनों ही के माध्यम से प्रौढ लोगों को शिक्षा देने के तरीके सिखाता था।

परन्तु श्रमिकों के लिए हमेशा यह सम्भव नहीं होता था कि वे शिक्षा प्राप्त करने के लिए अपनी रोजी छोड दें। संध्याकालीन कक्षाओं से यह समस्या हल हो गयी। यह नियम था कि ये कक्षाएँ दिन-भर का काम समाप्त होने के समय के बाद आरम्भ होती थीं। वे सप्ताह में तीन-चार बार एक समय में चार घंटे के लिए होती थी। अधिकांश उदाहरणो मे,

जिस दिन स्कूल लगता था उस दिन उनके काम के घंटों में कुछ कटौती कर दी जाती थी ताकि वे वहाँ जाकर पढ़ सकें।

लाखों प्रौढ़ छात्रों के स्कूलों के लिए जगह ढूँढना भी एक और कठिन समस्या थी। न तो रातोंरात इमारतें बनायी जा सकती थीं और न ही उन्हें बनाने के साधन उपलब्ध थे। इसलिए इस काम के लिए जो भी इमारत इस्तेमाल की जा सकती थी उसका उपयोग किया गया। खलिहानों, खाली गोदामों, शेडों आदि सभी को काम में लाया गया। बच्चों के सभी नियमित स्कूलों और श्रमिकों के क्लबों को शाम के वक्त प्रौढ़ों के स्कूलों के लिए इस्तेमाल किया जाता था। सरकारी दफ्तरों तथा संस्थाओं में मेज अलग हटाकर दीवारों पर ब्लैकबोर्ड और नक्शे लगाकर प्रौढ़ लोगों की कक्षाएँ चलायी जाती थीं। अकसर चायखानों में और लोगों के निजी घरों पर भी इस प्रकार की कक्षाएँ चलायी जाती थीं।

सोवियत संघ में पचास वर्ष की आयु तक के सभी प्रौढ़ लोगों के लिए साक्षरता का नियम बना दिया गया था। यह नियम सभी प्रौढ़ लोगों पर लागू होता था, जिनमे मजदूर, किसान और कहीं काम न करने वाली स्त्रियाँ शामिल थी। इस अध्यादेश के अन्तर्गत किसी अपवाद की गुजाइश नहीं थी। यह अपने ढंग का अकेला कानून था और दुनिया के शिक्षा के इतिहास में कही और इसकी मिसाल नहीं मिलती थी। ससार के तथा कथित उन्नत लोकतन्त्र भी, लेनिन से पहले या उनके बाद भी, ऐसा कानून बनाने की कल्पना नहीं कर पाये थे जिसके अनुसार सभी प्रौढ़ लोगों के लिए साक्षर होना अनिवार्य घोषित कर दिया गया हो। कानून के सहारे बच्चों के अलावा और किसी के लिए अनिवार्य साक्षरता लागू नही की गयी थी। किसी सरकार ने अब तक ५० वर्ष की आयु तक के लोगों के लिए साक्षरता को अनिवार्य बना देने की बात सोची तक नही थी। पूंजीवादी लोकतन्त्रों में और अन्य गैर-समाजवादी शासन-प्रणालियों में प्रौढ़ शिक्षा के बारे मे समझा जाता है कि "यह स्वैच्छिक प्रयास है जो अनिवार्य स्कूली शिक्षा की अवधि से अधिक उम्र

का व्यक्ति स्वयं करता है" (एडोल्फ ई० मेयर, बीसवीं शताब्दी में शिक्षा का विकास)। प्रौढ़ शिक्षा के बारे में इसी धारणा का परिणाम है कि इस बात के बावजूद कि इस समय सबसे अधिक आयु के प्रौढ़ व्यक्ति के जन्म के समय से ही प्रौढ़ शिक्षा अनिवार्य रहने के बावजूद आज भी गैर-समाजवादी राज्यों में सोवियत संघ की तुलना मे अधिक बडे पैमाने पर प्रौढ़ निक्षरता बनी हुई है, जबकि इतिहास की दृष्टि से सोवियत संघ अभी तक तुलनात्मक दृष्टि से प्रौढ़ नही हुआ है।

# अध्याय १४

## उपसंहार

लेनिन ने स्वयं ही अपने सपनो का सृजन किया और स्वयं ही उन्हें साकार किया। उन्होंने एक नयी समाजवादी संस्कृति का स्वप्न देखा, उसे साकार करने की योजना बनायी और अन्ततः उस सपने को पूरा कर दिखाया। उनकी दृष्टि में शिक्षित मनुष्य सबसे बड़ा सहारा और अशिक्षित मनुष्य सबसे बड़ी बाधा था। साक्षरता को वह "समाजवादी मानव" की बुनियादी आवश्यकता और समाजवादी संस्कृति का आधार मानते थे। उनका कहना था कि साक्षरता के बिना समाजवादी निर्माण सम्भव नहीं है। वह समाजवाद की स्थापना करने के लिए कृतसंकल्प थे उन्होने शत प्रतिशत साक्षरों के समाज की कल्पना की ८ वर्ष से ५० वर्ष तक की आयु के हर व्यक्ति के साक्षर बनना अनिवार्य ठहराने वाले अध्यादेश पर हस्ताक्षर किए और राकेट के वेग से निरक्षरता को मिटाने के लिए उन्होने एक राष्ट्रव्यापी व्यवस्था का निर्माण किया और उसे हर तरह से लैस करके इस काम में जुटा दिया !

उन सभी लोगों के साथ, जिन्हें समाज ने शिक्षा प्राप्त करने के अवसर से वंचित रखा था, एक जैसा वर्ताव करने का विचार लेनिन का ही था। लेनिन ही सबसे पहले प्रौढ देशवासियों पर ध्यान केंद्रित किया और उन्हें साक्षरता प्राप्त करने का अवसर प्रदान किया, हालांकि वे शिक्षा प्राप्त करने की सामान्य आयु पार कर चुके थे और काम करने तथा रोजी कमाने की अवस्था में पहुँच चुके थे। उन्होंने ही आयु, वर्ण, भाषा, जाति या रोजगार के आधार पर किसी भेदभाव के बिना हर निरक्षर स्त्री या पुरुष को साक्षरता प्राप्त करने का अधिकारी माना।

उन्होंने शिक्षा को लोकतान्त्रिक बनाया और हर बूढ़े और जवान,

का व्यक्ति स्वयं करता है" (एडोल्फ ई० मेयर, बीसवीं शताब्दी में शिक्षा का विकास)। प्रौढ़ शिक्षा के बारे में इसी धारणा का परिणाम है कि इस बात के बावजूद कि इस समय सबसे अधिक आयु के प्रौढ़ व्यक्ति के जन्म के समय से ही प्रौढ़ शिक्षा अनिवार्य रहने के बावजूद आज भी गैर-समाजवादी राज्यों में सोवियत संघ की तुलना में अधिक बड़े पैमाने पर प्रौढ निक्षरता बनी हुई है, जबकि इतिहास की दृष्टि से सोवियत संघ अभी तक तुलनात्मक दृष्टि से प्रौढ़ नहीं हुआ है।

## अध्याय १४

## उपसंहार

लेनिन ने स्वयं ही अपने सपनों का सृजन किया और स्वयं ही उन्हें साकार किया। उन्होंने एक नयी समाजवादी संस्कृति का स्वप्न देखा, उसे साकार करने की योजना बनायी और अन्ततः उस सपने को पूरा कर दिखाया। उनकी दृष्टि मे शिक्षित मनुष्य सबसे बड़ा सहारा और अशिक्षित मनुष्य सबसे बड़ी बाधा था। साक्षरता को वह "समाजवादी मानव" की बुनियादी आवश्यकता और समाजवादी संस्कृति का आधार मानते थे। उनका कहना था कि साक्षरता के बिना समाजवादी निर्माण सम्भव नही है। वह समाजवाद की स्थापना करने के लिए कृतसंकल्प थे उन्होंने शत प्रतिशत साक्षरों के समाज की कल्पना की ८ वर्ष से ५० वर्ष तक की आयु के हर व्यक्ति के साक्षर बनना अनिवार्य ठहराने वाले अध्यादेश पर हस्ताक्षर किए और राकेट के वेग से निरक्षरता को मिटाने के लिए उन्होंने एक राष्ट्रव्यापी व्यवस्था का निर्माण किया और उसे हर तरह से लैस करके इस काम मे जुटा दिया !

उन सभी लोगों के साथ, जिन्हें समाज ने शिक्षा प्राप्त करने के अवसर से वंचित रखा था, एक जैसा बर्ताव करने का विचार लेनिन का ही था। लेनिन ही सबसे पहले प्रौढ़ देशवासियों पर ध्यान केंद्रित किया और उन्हें साक्षरता प्राप्त करने का अवसर प्रदान किया, हालाँकि वे शिक्षा प्राप्त करने की सामान्य आयु पार कर चुके थे और काम करने तथा रोजी कमाने की अवस्था मे पहुँच चुके थे। उन्होंने ही आयु, वर्ण, भाषा, जाति या रोजगार के आधार पर किसी भेदभाव के बिना हर निरक्षर स्त्री या पुरुष को साक्षरता प्राप्त करने का अधिकारी माना।

उन्होंने शिक्षा को लोकतान्त्रिक बनाया और हर बूढ़े और जवान,

हर औरत और मर्द को साक्षरता की शिक्षा दिलायी और इस प्रकार स्वयं अपने स्वप्न को साकार करना आरम्भ किया किया। निरक्षरता-विरोधी अभियान छेड़ने का श्रेय स्वयं उन्ही को है।

शायद इसकी कल्पना करना भी कठिन है सोवियत संघ के वे नागरिक जो आज चन्द्रमा पर अपने आप चलने वाले यान उतार रहे हैं, जो सोवियत संघ के पूरे विस्तार में इतने सुन्दर बैले-नृत्य प्रस्तुत करते है, जो उच्च कोटि का साहित्य, संगीत तथा नाटक तैयार करते हैं, और संसार को वैज्ञानिक तथा टेक्नोलोजिकल जानकारी प्रदान करते है, १९१७ में उनमें से अधिकाँश निरक्षर थे। यदि ऐतिहासिक ब्योरा उपलब्ध न होता तो यह विश्वास भी न किया जा सकता कि पचास वर्ष पहले ताजिकिस्तान, या उजबेकिस्तान या सोवियत मध्य एशिया के अन्य भागों में अर्द्ध-साक्षर मुल्ला को छोड़कर सभी लोग निरक्षर होते थे कि लड़कियो को किताब छूने तक नही दी जाती थी और लड़के केवल कुरान रटकर उसका पाठ कर सकते थे।

आज यह दुनिया ही बदल गयी है—वह अब ऐसी जगह बन गई है जहाँ निरक्षरता अतीत की केवल एक स्मृति मात्र है और जहाँ अब लोग नागरिकों की तुलना इस आधार पर नही करते कि कौन किस हद तक साक्षर है बल्कि इस आधार पर करते है कि उसने सामान्य शिक्षा प्राप्त की है या विशेष ज्ञान प्राप्त किया है।

यह महान परिवर्तन किसी जादू या चमत्कार का नही, वल्कि निरक्षरता-विरोधी कार्यकर्ताओं और सोवियत सरकार के अनथक परिश्रम का परिणाम है। अखबार, रेडियो, सिनेमा, थियेटर और जन-संचार के अन्य सभी माध्यम इस काम में लगा दिये गए। लाखों की संख्या में पुस्तकें छापी गयीं। स्कूलों, पुस्तकालयों, वाचनालयों, संग्रहालयों, क्लबों और लाल कोनों की एक विस्तृत शृंखला स्थापित की गयी; अध्यापक प्रशिक्षित किए गये। शिक्षण-सम्बन्धी शोध-कार्य किए गये। तीव्र गति से

शिक्षा देने की विधियाँ निकाली गयी। भाषाएँ तैयार की गयीं और नये साँचों में ढाली गयी। निरक्षरता-विरोधी सैनिकों की एक पूरी सेना को इस काम से जुटा दिया गया। शीघ्र ही पूरे सोवियत देश में साक्षरता केन्द्रों की एक व्यापक व्यवस्था स्थापित हो गयी।

शिक्षा के क्षेत्र पर शासक वर्गों का एकाधिकार तुरन्त समाप्त हो गया और साक्षरता सार्वजनिक संपत्ति हो गयी। समानता तथा सार्विकता के सिद्धान्तों पर आधारित सार्वजनिक शिक्षा की नयी, लोकतान्त्रिक तथा स्वीकृति प्रणाली की स्थापना हुई जिसकी बदौलत शिक्षा के द्वार सभी सोवियत नागरिकों के लिए खुल गये।

सोवियत सरकार ने किसी भी और विषय को निरक्षरता के उन्मूलन से बढ़कर प्राथमिकता नहीं दी और इससे सराहनीय परिणाम प्राप्त हुए। लेनिन का अध्यादेश जारी होने बाद पहले बारह महीनो के अन्दर लगभग ३० लाख लोगों को पढना-लिखना और गिनती गिनना सिखा दिया गया था। लाल सेना में भी निरक्षरता के विरुद्ध लड़ाई तेजी से चलती रही। सैनिकों को बन्दूकों के साथ पाठ्य-पुस्तकें और लिखने के लिए कॉपियाँ भी दी जाती थीं। सोवियत सत्ता के प्रथम दस वर्षों में लगभग ८० लाख प्रौढ लोगों को पढना और लिखना सिखा दिया गया था। प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान निरक्षरता को मिटाने के लिए जबरदस्त अभियान चलाया गया। तरुण कम्युनिस्ट लीग ने 'हर साक्षर एक निरक्षर को पढ़ाये' का नारा लेकर सांस्कृतिक जेहाद छेड़ दिया। सोवियत जनता ने बडे उत्साह से इसका स्वागत किया। स्वयं सेवक अध्यापको ने १९२८ और १९३२ के बीच ३ करोड़ ४० लाख लोगों को पढ़ना और लिखना सिखाया। देश मे शायद ही कोई ऐसी जगह रही हो जहाँ निरक्षरो ने वर्णमाला का ज्ञान न प्राप्त कर लिया हो। काकेशस की पहाड़ी बस्तियों में, ताजिकिस्तान के छोटे-छोटे पुरवों मे, कज़ाखस्तान और काल्मिक के स्तेपी मैदानों के खानाबदोशो के

यूर्ताओं में, उक्राइन की झोंपड़ियों में और चुकोत्का के छोटे-छोटे घरों मे विभिन्न जातियों के लोगों ने पढ़ना और लिखना सीखा। जिन जातियों की क्रान्ति से पहले अपनी कोई भाषा नहीं थी उन्होंने भी पढना-लिखना सीख लिया। दूसरी और तीसरी पंचवर्षीय-योजनाओं के दौरान सोवियत सघ की प्रौढ़ जनसंख्या के बीच निरक्षरता को लगभग पूरी तरह मिटा दिया गया। १९२० से १९४० तक के दौरान कुल मिलाकर लगभग ५ करोड़ पुरुषों तथा स्त्रियों को पढ़ना और लिखना सिखाया गया" (ए शार्ट हिस्ट्री आफ द यू० एस० एस० आर० खन्ड २, पृष्ठ ३४८)।

लेनिन ने १९१७ की क्रान्ति के फौरन बाद जिस अभियान को छेड़ने की तैयारी शुरू की थी वह समय रहते ही छेड़ दिया गया। सोवियत संघ में जितने थोड़े समय मे सभी लोगों को साक्षर वना दिया गया वैसा पहले कभी सुना भी नही गया था। १९५९ की जनगणना ने इस स्थिति की पुष्टि की। सारे देश मे विभिन्न श्रेणियों की शिक्षा-सस्थाओं की जो विस्तृत शृंखलों स्थापित कर दी गयी थी उसने निरक्षरता को मिटाने और उच्चतर शिक्षा को आगे वढाने दोनों ही के क्षेत्र मे उल्लेखनीय सफलताएँ प्राप्त की। निरक्षर देश से सोवियत संघ एक ऐसा देश वन गया जिसकी लगभग पूरी आबादी शिक्षा प्राप्त कर चुकी थी।

सोवियत संघ मे शिक्षा ने वहुत प्रगति की है। लगभग पूर्ण निरक्षरता से की स्थिति अब वह विज्ञान तथा संस्कृति के सुदूरतम क्षितिजों तक पहुँच गयी है। इस समय आठ करोड सोवियत वासी, अर्थात् कुल सोवियत नागरिकों मे से एक-तिहाई स्कूलों, संस्थानों, विश्वविद्यालयों या किसी न किसी प्रकार की कक्षाओं में जाते है। इस समय सोवियत संघ न केवल पूर्ण साक्षरता का देश है, वल्कि उसके ६ करोड़ ५० लाख नागरिक ऐसे हैं, जो उच्च तथा माध्यमिक (आशिक अथवा पूर्ण) शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं। सरकार स्कूल जाने वाले हर वच्चे की शिक्षा पर एक वर्ष मे लगभग १५० रूवल खर्च करती है।

१९७० की जनगणना में शिक्षा के क्षेत्र में सोवियत संघ की सफलताएँ प्रतिबिम्बित होती है। देश में रहने वाले पुरुषों में से ९९.८ प्रतिशत और स्त्रियों में से ९९.७ प्रतिशत साक्षर हैं। सोवियत संघ में ३० लाख से अधिक अध्यापक और १० लाख से अधिक शोधकर्त्ता हैं।

सोवियत संघ मे दुनिया की आबादी का लगभग बारहवाँ भाग रहता है। परन्तु दुनिया मे प्रकाशित होने वाली हर चौथी पुस्तक सोवियत पुस्तक होती है। हर चौथा छात्र सोवियत छात्र है। हर चौथा शोधकर्त्ता सोवियत शोधकर्त्ता है और हर चौथा डाक्टर सोवियत डाक्टर है।

●